राष्ट्रीय छात्रशक्ति

"युवा भारत समर्थ भारत"

विशेषांक : 12 जनवरी 2016

संपादकीय

चार दशकों की यह निरंतर यात्रा है। कभी गंगा की तरह प्रवाहमान तो कभी सरस्वती की भांति अमूर्त, लेकिन छात्रशक्ति की यात्रा निरंतर जारी रही। ऊबड़–खाबड़, ऊंचे–नीचे मार्गों में से भी ठहरती, ठिठकती, राह बनाती छात्रशक्ति की निरंतरता का प्रतीक है इसका अनेक ठहरावों के बाद भी पुनः – पुनः प्रकाशन। नए रूप में, नए आकार में।

इस यात्रा में अनेक मील–पत्थर हैं जो छात्रशक्ति से जुड़े कार्यकर्ताओं को गौरव–बोध कराते हैं। युग का आह्वान था– "नवीन पर्व के लिए नवीन प्राण चाहिए"। इस आह्वान को देश के छात्र–युवाओं तक पहुंचाने के लिए सत्तर के दशक में तत्कालीन कार्यकर्ताओं की टोली ने छात्रशक्ति के प्रकाशन का निर्णय किया। संपादन की बाग–डोर संभाली श्री अरुण जेटली ने। तब के अंक उनकी लेखनी की प्रखरता के साक्षी हैं। बाद में सर्वश्री महावीर दत्त गिरि, राजकुमार शर्मा, डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी, डॉ. मुकेश अग्रवाल जैसे विद्वानों ने इस संकल्प को आगे बढाया।

युवा होते भारत के आज के नागरिकों को राष्ट्रीय चिंतन से जोड़ने, समय की कसौटी पर खरे उतरे मूल्यों, विचारों और कार्यपद्धति से नए कार्यकर्ताओं को परिचित कराने, महापुरुषों द्वारा अपने चिंतन और आचरण द्वारा आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रदत्त दिशाबोध का संकलन करते हुए एक विशेषांक का प्रकाशन किया जाए, यह योजना बनी तो इसके क्रियान्वयन में अनेक कार्यकर्ता आ जुटे।

प्रस्तुत विशेषांक के लिए जब लेख आमंत्रित किए गए तो कल्पना नहीं थी कि लेखकों का ऐसा प्रतिसाद प्राप्त होगा। किंतु यह आह्वान केवल कुछ शब्द कागज पर उतार देने भर का नहीं था। लेखकों ने लिखते समय अभाविप के अपने कार्यकाल को फिर से जिया है। खट्टी – मीठी स्मृतियों में डूबते–उतराते अपनी तमाम व्यस्तताओं में से समय निकालकर लिखना उनके लिए आत्मतुष्टि का विषय बन गया।

डॉ. बजरंगलाल गुप्त, डॉ. महेश चंद्र शर्मा, सदाशिवराव देवघर, राजकुमार भाटिया, अतुलभाई कोठारी आदि ने अपनी व्यस्तता में से समय निकालकर लिखा, यह उनके स्नेह का परिचायक है। छात्रशक्ति छपे और उसमें स्व. बाल आपटे जी का लेख न हो, यह उनके रहते कभी नहीं हुआ। आज उनकी कमी अनुभव हो रही है।

छात्रशक्ति का यह विशेषांक एक ऐसा पड़ाव है जहां उसने एक नया क्षितिज स्पर्श करने का संकल्प किया है। विद्यार्थी परिषद् देश का सबसे बडा छात्र संगठन है, यह स्थापित है। छात्रशक्ति की प्रसार संख्या और कलेवर भी इस "विराट्" के अनुरूप हो, यह चुनौती हमारे सामने है। वरिष्ठ कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन और वर्तमान टोली की संभाल के बल पर इस चुनौती से पार पाएंगे।

संपादक के रूप में लगभग दो दशकों से इस यात्रा में सहयात्री होने की कृतार्थता से अभिभूत हूं। संगठन द्वारा जताए गए विश्वास और पाठकों द्वारा मिले स्नेह के लिए आभार व्यक्त करने का यह अवसर है। इसमें सामग्री की श्रेष्ठता को बनाए रखने का दायित्व सन्निहित है, छात्रशक्ति की संपादकीय टोली इसका यथाशक्ति पालन करने का प्रयास करेगी।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

आपका,

आशुतोष

स्मृति ज़ूबिन इरानी
Smriti Zubin Irani

मंत्री
मानव संसाधन विकास
भारत सरकार
MINISTER
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

हर्ष का विषय है कि छात्र हित एवं छात्रों को उचित दिशा प्रदान करने के क्षेत्र में कार्यरत अग्रणी छात्र संगठन 'अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्' द्वारा इस वर्ष स्वामी विवेकानंद जयंती के उपलक्ष्य में राष्ट्रीय छात्रशक्ति पत्रिका का मुख्य विशेषांक *"युवा भारत - समर्थ भारत"* का प्रकाशन किया जा रहा है।

युवा वर्ग देश का भविष्य होने के साथ-साथ देश के विकास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है और सकारात्मक सोच ही युवाओं को राष्ट्र निर्माण में योगदान के लिए प्रेरित करती है। भारतीय महापुरुषों के अनमोल विचार ही हमारे प्रेरणास्रोत है।

स्वामी विवेकानंद युवा सन्यासी के रूप में भारतीय संस्कृति की सुगंध विदेशों में बिखेरने वाले साहित्य, दर्शन और इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान थे। उनके ओजस्वी एवं सारगर्भित व्याख्यानों की प्रसिद्धि विश्वभर में है। देश के युवाओं के प्रेरणास्रोत स्वामी विवेकानंद जी ने भी युवा पीढ़ी को राष्ट्र उन्नयन में महत्वपूर्ण माना है। मुझे विश्वास है कि पत्रिका द्वारा स्वामी विवेकानंद जी के जीवन और उनके अनमोल विचारों का युवा छात्र-छात्राओ पर साकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और युवा वर्ग इससे अवश्य लाभान्वित होगा।

मैं अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् को स्वामी विवेकानंद जी की जयंती पर प्रकाशनीय विशेषांक की हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करती हूँ।

स्मृति इरानी

(स्मृति ज़ूबिन इरानी)

Office : Room No. 301 'C' Wing, Shastri Bhawan, New Delhi - 110 115
Phone : 91-11-23782387, 23782698, Fax No. : 91-11-23382365

अनुक्रम

क्रमांक	लेख शीर्षक	लेखक	पृष्ठ संख्या
युवा भारत			
1.	युवा एवं संस्कृति	डॉ. नागेश ठाकुर	6
2.	युवाओं का बौद्धिक दायित्व	शंकर शरण	9
3.	परिवर्तन का अग्रदूत युवा	सदाशिव देवधर	13
4.	भारतीय भाषाएं और युवा पीढ़ी के मानवीय अधिकारों का प्रश्न	डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री	20
5.	युवा आंदोलन और भारतीय राजनीति	डॉ. शिवशक्ति बक्शी	24
6.	संगठित युवा, समर्थ युवा	अनिल सौमित्र	28
7.	युवा शक्ति का देश भारत	आशीष कुमार अंशु	30
8.	बदलते सामाजिक परिवेश में युवाओं की भूमिका	मनोज मिश्र	32
9.	तपः पूत ही हो सकते हैं युवाओं के प्रेरक	उमेश चतुर्वेदी	34
10.	युवा और बदलाव	अनिल पांडेय	37
11.	देश और समाज के उत्थान में युवाओं की भूमिका	डॉ. सौरभ मालवीय	40
12.	बदलते सामाजिक परिवेश में युवाओं की भूमिका	ऋतेश पाठक	42
13.	चाहिए सृजनशील युवा...	संजीव कुमार सिन्हा	45
14.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में युवाओं के समक्ष चुनौतियां	हर्षवर्धन त्रिपाठी	49
15.	युवा जीवन शैली समस्या और समाधान	डॉ. अभिलाषा द्विवेदी	53
16.	STUDENT POWER	Raj Kumar Bhatia	56
17.	EDUCATION & 5 METHODS BY WHICH ABVP CAN FIX IT	Dr. Rashmi Singh	59
18.	YOUTHS : THE HARBINGER OF CHANGE	Punit Pushkar	62
समर्थ भारत			
19.	नवयुग निर्माता भारत	सुनील आंबेकर	64
20.	विजिगीषु भारत	डॉ. महेश चंद्र शर्मा	66
21.	स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन का वर्तमान शिक्षा में समावेश	अतुल कोठारी	69
22.	आध्यात्मिकता और युवा मस्तिष्क	ए.डी.एन. बाजपेयी	73
23.	भारतीय राष्ट्रीय संकल्पना	डॉ. पवन कुमार शर्मा	77
24.	विजेता बनने का सपना और संकल्प	प्रो. राकेश सिन्हा	79
25.	छात्र–युवा ही बनायेंगे समर्थ भारत	संजय द्विवेदी	82

26.	अद्भुत भारत	राजेश कटियार	85
27.	सामर्थ्य की विजिगीषु वृत्ति	डॉ. जयप्रकाश सिंह	87
28.	विविधता में एकता, भारत की विशेषता	डॉ. राजनारायण शुक्ल	91
29.	युवा भारत – समर्थ भारत	डॉ. सुभाष शर्मा	95
30.	समृद्ध भारत	गोपाल कृष्ण अग्रवाल	99
31.	वैश्विक नेतृत्व करने में सक्षम भारत	विकास आनन्द	101
32.	अर्थव्यवस्था का आध्यात्मिक मॉडल है एकात्म मानववाद	पंकज झा	103
33.	भारतीय मूल्य – शाश्वत मूल्य	व्यालोक पाठक	107
34.	DEVELOPEMENT MANTRA : BACK TO THE ROOTS, OUR VILLAGES	K. A. Badrinath	110
35.	INDIA'S ROLE AS A WORLD LEADER IN PROTECTING TRADITIONAL SCIENTIFIC KNOWLEDGE	Sangeeta Godbole	112
36.	LIFE WITH DIGNITY IS THAT TOO MUCH TO ASK FOR ?	Monika Arora	115
37.	CULTURAL NATIONALISM : BASIC PREMISE OF INDIA	Sandeep Mahapatra	116

प्रेरणा पुंज

38.	युवाओं के प्रेरणापुंज : स्वामी विवेकानंद	डॉ. बजरंग लाल गुप्ता	119
39.	राष्ट्र ही था जिसका धर्म	डॉ. अवनिजेश अवस्थी	124
40.	वीर सेनापति लाचित बरफुकन	नीरज श्रीवास्तव	127
41.	राष्ट्रवाद के प्रखर प्रहरी मालवीय जी	शिवानंद द्विवेदी	133
42.	सम्पूर्ण क्रांति के पुरोधा लोकनायक जयप्रकाश नारायण	डॉ. अरुण कुमार भगत	135
43.	जनजातियों के सखा : अशोक भगत	आशीष कुमार "अंशु"	139
44.	बच्चों को मौत, बाघों को जिंदगी	उमाशंकर मिश्र	142
45.	युवाओं के प्रेरणास्रोत नेताजी	अवनीश राजपूत	148
46.	नीरजा भनोट : अदम्य साहस की भावना	आकाश कुमार राय	150
47.	भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन की निरुपम विभूति : चन्द्रशेखर आजाद	अजीत कुमार सिंह	154
48.	VEDANTA IN DAILY LIFE : VIVEKANAND'S MESSAGE TO INDIAN YOUTH	Dr. Aditya K. Gupta	158
49.	NIVEDITA LOKMATA	Dr. Anirban Ganguly	163
50.	HEM CHANDER VIKRAMADITYA AN EPITOME OF BRAVERY, COURAGE, HARDWORK AND INTELLEGENCE	Manu Katariya	165

युवा भारत

युवा एवं संस्कृति

– डॉ. नागेश ठाकुर

युवा परिवर्तन का वाहक है। संसार में जितने भी परिवर्तन हुए, इतिहास साक्षी है कि उसमें युवाओं की प्रमुख भूमिका रही। भारत का आजादी का आंदोलन हो, चाहे 1975 में आपातकाल का समय, युवाओं ने ही महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। आजादी के आंदोलन में अपने जीवन का बलिदान देने वाले राजगुरू, भगत सिंह, सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद जैसे अनेक क्रांतिकारी हों, चाहे 1975 में आपातकाल के विरुद्ध जयप्रकाश नारायण के साथ खड़ी युवा शक्ति हो, युवा शक्ति ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। युवा यानी कौन? क्या यह आयु विशेष का नाम है? क्या यह शारीरिक दशा है या मानसिक दशा है? अगर आयु के अनुसार निष्कर्ष निकालें तो 1985 में यू. एन. ओ. ने आयु के आधार पर जो व्याख्या की है उसमें 35 वर्ष तक के मनुष्य को युवा कहा गया था लेकिन अविकसित और विकासशील देशों में इसके बारे में भेद निर्माण हुआ था। उनके मतानुसार युवावस्था की आयु 40 वर्ष तक होनी चाहिए। आयु के अनुसार युवा कौन? यह तय करना हो तो इसके आगे नहीं जा सकते। लेकिन क्या यह निष्कर्ष सत्य है या काफी है। हमें प्राय 20 वर्ष के बूढ़े और 75 वर्ष की आयु के युवाओं के कई उदाहरण देखने को मिलते हैं। आज तक जिनके नेतृत्व में युवा एकत्रित हुए क्या वे सभी आयु के अनुसार युवा थे? 1975 में जयप्रकाश नारायण ने जो संपूर्ण परिवर्तन का आंदोलन छेड़ा उनके आंदोलन के समर्थन में भी बड़ी संख्या में युवा शक्ति एकत्रित हुई थी। हाल ही में भ्रष्टाचार के खिलाफ अन्ना हजारे द्वारा चलाए गए आंदोलन में भी युवा शक्ति दिखाई दी। क्या यह दोनों महानुभाव आयु के अनुसार युवा थे? इसका अर्थ हुआ कि जो युवाओं की भावनाओं को समझता है, वह युवा है । अतः युवावस्था एक स्पिरिट है यानी मानसिक दशा है। साधारणतः समाज जब आज भी युवा पीढ़ी के बारे में बात करता है तो अक्सर यह सुनने को मिलता है कि आज का युवा तो संस्कारविहीन हो अपनी संस्कृति से कट गया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आ गया है, व्यसनाधीन हो गया है। समाज के तथाकथित बुद्धिजीवी शब्दों के तीर निकालकर युवाओं को कोसने का काम करते हैं। परंतु जब हम समग्रता से युवा के विषय में गंभीर चिंतन करते हैं तो हमें युवा का एक वास्तविक चरित्र ध्यान में आता है। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् ने युवा के इस वास्तविक चरित्र की पहचान की खोज करते हुए पूरे विश्व को युवा की वास्तविक संकल्पना प्रस्तुत की है। विद्यार्थी परिषद् ने घोषित किया कि छात्रशक्ति राष्ट्रशक्ति है। युवा एक शक्ति का नाम है, साहस का नाम है, ज्ञान का नाम है। युवावस्था एक ऐसी अवस्था है जिसमें सबसे अधिक ऊर्जा होती है, सबसे ज्यादा संघर्षशीलता रहती है, जोखिम उठाने की हिम्मत रहती है अधिकतम इच्छाशक्ति रहती है, स्वार्थ की भावना का स्तर सबसे कम रहता है, तथा सोच में पारदर्शिता और शुद्धता रहती है। स्वामी विवेकानंदजी ने युवा के बारे में कहा है युवा यानी "Having muscles of iron and backbone of steel." युवा के पास जो यह अपार शक्ति है उस शक्ति का सही प्रयोग कैसे हो यह कार्य संस्कृति का है। जिस प्रकार से नाभिकीय ऊर्जा में अपार शक्ति रहती है अगर हम इस नाभिकीय ऊर्जा को नियंत्रित रूप से उपयोग करते हैं तो यह ऊर्जा समाज के विकास में काम आती है तथा समाज में शांति और समृद्धि आती है। परंतु अगर इस ऊर्जा का प्रयोग अनियंत्रित रूप से किया जाए तो हिरोशिमा और नागासाकी जैसी विध्वंसकारी घटनाएं होती हैं, विनाश होता है, अशांति होती है तथा मनुष्य जाति तथा प्रकृति की हानि होती है।

जो संस्कृति इस शक्ति, ऊर्जा को ठीक से Channelize करते हुए युवाओं में अच्छे संस्कार पैदा करती है, त्याग की भावना भरती है, अन्याय के खिलाफ लड़ने की शक्ति पैदा करती है, यानी मानव एवं प्रकृति के प्रति

संवेदनशील बनाती है वह संस्कृति उच्च संस्कृति मानी जाती है। संस्कृति यानी क्या इसे भी गहराई से समझना बहुत आवश्यक है। मानव समाज अतीत में पैदा होता है, जीता वर्तमान में और सोचता भविष्य के बारे में है। अन्य जीव केवल वर्तमान में जीते हैं। मानव समाज में यह विशेषता संस्कृति के कारण से है।

संस्कृति यानी संस्कारों की कृति। मानव समाज को उन्नत करने तथा उसकी रक्षा के लिए जो आचार विचार विकसित होते हैं उसे संस्कृति कहते हैं। संस्कृति जीवन के मूल्यों से जोड़ती है। जीवन से भी बढ़कर जिन मूल्यों का आविष्कार किया है वह संस्कृति है। देशप्रेम के लिए जीना, बलिदान, अहिंसा एवं संवेदनशीलता की भावना होना सुसंस्कृत होने का प्रमाण है। संस्कृति एवं सभ्यता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। संस्कृति विचार के रूप में है तो सभ्यता उसका साकार (भौतिक) रूप है। विचार पहले आता है आकार बाद में बनता है। बच्चे में पहले जीव आता है फिर आकार का रूप आता है।

संस्कृति तीन कार्य करती है:

1. पांचों इंद्रियों का विकास करती है। यह संस्कृति का सबसे निचला स्तर (भौतिक रूप) है। यह सार्वभौमिक नहीं है।
2. विचार जगत को समृद्ध करती है। ज्ञान–विज्ञान और दर्शन का विकास करती है। विज्ञान और दर्शन यह दोनों परिवर्तनशील है। यह संस्कृति के प्रकटीकरण का दूसरा स्तर है। यह भी सार्वभौमिक नहीं है।
3. संस्कृति भावजगत को समृद्ध करती हैं। It is a world of feelings and emotions. यह सार्वभौमिक तत्त्व है। किसी भी आयु का हो, जाति का हो, प्रेम, दया, घृणा एवं द्वेष का भाव सार्वभौमिक है।

भावजगत को शुद्ध बनाने का कार्य संस्कृति ही करती हैं इसलिए अपने देश में कवियों, कलाकारों को ज्यादा मान्यता और सम्मान दिया जाता है।

जो संस्कृति विचार जगत और भाव जगत को शुद्ध करते हुए समृद्ध करने का कार्य करती है वही संस्कृति मानव एवं प्रकृति का कल्याण कर सकती है। भारतीय संस्कृति यह दोनों प्रकार के कार्यों को पुष्ट करती है। भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक संस्कृति है, सनातन है तथा संपूर्ण मानव समाज के साथ साथ संपूर्ण प्रकृति के संरक्षण को संपूर्ण रूप से विचार करती है। भारतीय संस्कृति के अनुसार सभी में एक ही तत्त्व है चाहे जीव हो या पदार्थ हो सभी में एक ही प्रकार का तत्त्व विद्यमान है एक से ही अनेक है। अतः अनेकता में एकता यह प्रकृति का मूल सिद्धांत हैं। पश्चिमी संस्कृति के अनुसार प्रकृति में हर वस्तु मनुष्य के भोग के लिए है। अतः मनुष्य ने प्रकृति का शोषण करना प्रारंभ किया जिसने आज विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं को जन्म दिया है।

भारतीय संस्कृति में मानव समाज में पुरुषार्थ के चार गुण माने जाते हैं। धर्म, अर्थ, काम (इच्छा) और मोक्ष। धर्म यानी धारण करने योग्य नैतिक दायित्व के अनुसार जीवन पद्धति, प्रकृति का दोहन शोषण नहीं, आवश्यकतानुसार जीवन–यापन के लिए जितना जरूरी है उतना प्रयोग, संयमित उपयोग करते हुए आत्म उन्नति के लिए मोक्ष की कल्पना यानी प्रकृति के साथ अपने आप को एकरूप करना, यह हमारी संस्कृति की विशेषताएं हैं। जिस संस्कृति की जड़ें जितनी गहरी होती हैं, वह संस्कृति उतनी ही विकसित होती है। उस संस्कृति का विकास मानव समाज के विकास के साथ–साथ होता रहता है। तूफान या हवा का जितना बड़ा झोंका आए, उस संस्कृति पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो संस्कृति खोखली होती है वह उस पेड़ के समान होती है जिसकी जड़ें कमजोर रहती हैं, जल्दी विकसित होता है और हवा का हल्का सा झोंका आने पर ढह जाता है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भी हमें कई बार इस पेड़ की भांति जल्दी बढ़ता हुआ दिखाई देता है परंतु इसकी जड़ें इतनी खोखली हैं कि इसका प्रभाव हमारे युवाओं के मन से जल्दी ही समाप्त हो जाएगा।

भारतीय संस्कृति की जड़ें बहुत मजबूत हैं गहरी हैं, शाश्वत हैं तथा सनातन हैं। कहते हैं:

यूनान, मिस्र, रोमां सब मिट गए जहां से ।
है बात कुछ कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।।

भारतीय संस्कृति समुद्र के समान है इसमें जो भी आया समा गया। जिस प्रकार समुद्र में अनेक नदियां मिलकर अपना अस्तित्व खो देती हैं, उसी प्रकार भारत में भी आक्रमणकारी प्रवृत्ति वाली अनेक संस्कृतियां आईं, भारतीय संस्कृति ने इन सभी को अपने में समा लिया।

वर्तमान समय में कई बार जिस प्रकार से लोहे की उपरी परत पर जंग लगने से ऐसा प्रतीत होता है कि पूरा का पूरा लोहा खराब हो गया है, पर लोहे को बार–बार घिसने से उसकी ऊपरी परत की जंग जाने पर लोहा अपना वास्तविक रूप प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार भारतीय समाज विशेषकर युवा समाज में जो पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव की परत कुछ मात्रा में दिखाई देती है उसे हटाने का कार्य करने का दायित्व आज की संगठित युवाशक्ति का है। यह कार्य स्वामी विवेकानंदजी ने अपने जीवन के एक–एक पल की आहुति देकर भरतीय संस्कृति का डंका पूरे विश्व में स्थापित किया। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि जो युवा इस संस्कृति के वाहक हैं, संस्कृति की गहराई को समझते हैं, संगठित होकर युवा समाज को जागृत करके इस संस्कृति को पुष्ट करने का कार्य करे ताकि भारत के साथ–साथ संपूर्ण विश्व की मानव जाति का कल्याण हो सके तथा प्रकृति का भी संरक्षण हो सके। आज युवा को देखने की दृष्टि भी बदलनी होगी। कई बार जीन्स या आधुनिक कहे जाने वाली वेश–भूषा पहनावे वाले युवा अपनी संस्कृति से कट गए हैं, सुसंस्कृत नही हैं, ऐसा मान लेना बहुत बड़ी भूल है। ऐसे युवाओं के अन्तःकरण में मूल्यों के प्रति गहरी आस्था होती हैं उन युवाओं की इस वृत्ति को जागृत करने के लिए आदर्श स्थापित करते हुए उन्हें Ignite or inspire करने की आवश्यकता है।

दुनिया भर में जब कई व्यवस्थाएं समाज उपयोगी नही रहतीं, जब सता भ्रष्ट और निरंकुश हो जाती, व्यवस्थाएं गल–सड़ जाती हैं ऐसे समय में युवा ही परिवर्तन का वाहक बनकर अपने–अपने समाज की व्यवस्थाओं को पुनर्स्थापित करते हैं। आज दुनिया को ऐसी संस्कृति की अत्यंत आवश्यकत्ता है जो युवाओं में त्याग, बलिदान, सत्य, अहिंसा और सामाजिक संवेदना की भावना जागृत कर एक सत्यनिष्ठ कर्मयोगी युवा का निर्माण करे जो अपने–अपने समाज के निर्माण में कार्य करते हुए संपूर्ण विश्व का कल्याण करे।

(लेखक अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं)

जो तुम सोचते हो वो हो जाओगे, यदि तुम खुद को कमजोर सोचते हो, तुम कमजोर हो जाओगे। अगर खुद को ताकतवर सोचते हो, तुम ताकतवर हो जाओगे।

(स्वामी विवेकानंद)

युवाओं का बौद्धिक दायित्व

— शंकर शरण

कहावत है कि जोश के साथ होश भी जरूरी है। यह विशेषकर युवाओं के लिए अधिक ध्यान देने योग्य है। उनमें स्वभाविक रूप से सत्यनिष्ठा, देश–भक्ति और आदर्श–प्रेम होता है लेकिन यह भावना मात्र है। इस भावना को प्रामाणिक ज्ञान–पिपासा से जोड़ना और जोड़े रखना आवश्यक है। यह न हो सकने के कारण ही स्वतंत्र भारत में हजारों आदर्शवादी युवा कम्युनिज्म, सेक्यूलरिज्म, इस्लामिज्म आदि के जाल में फंसकर स्वयं को व्यर्थ या हानिकारक गतिविधियों में लगाते रहे हैं।

अतः युवाओं के लिए अनिवार्य है कि वे गंभीर ज्ञानार्जन को अपना नियमित कर्तव्य समझें। हमारे नेतृत्वकारी लोग इसके प्रति पर्याप्त सचेष्ट नहीं रहे हैं। उसी का कुफल है कि कई केंद्रीय विश्वविद्यालय घातक विचारधाराओं तथा देश–द्रोही गतिविधियों की नर्सरी बनकर रह गए हैं। यदि दर्शन, इतिहास, साहित्य आदि में पारंगत होना भी युवाओं के लिए एक जरूरी गुण, एक उपलब्धि, एक लक्ष्य बनाया गया होता, तो आज यह दृश्य न होता।

बहुतेरे आदर्शवादी युवा फौरी राजनीतिक गतिविधियों को अधिक महत्व देकर ज्ञानार्जन को जाने–अनजाने दोयम महत्व दे डालते हैं। यह भयंकर भूल है। वे गतिविधियां तो आजीवन चलती रहेंगी, क्योंकि न कभी समस्याएं खत्म होती हैं, न संघर्ष। जबकि बुनियादी, व्यवस्थित और सार्थक अध्ययन करने की आयु किशोरावस्था से लेकर युवावस्था ही है। यदि इसका सदुपयोग न हो सका, तो व्यक्ति और समाज, दोनों को अपरिमित हानियां होती हैं। सबसे प्रत्यक्ष हानि यह है कि सही विचारों की जगह गलत विचार, ज्ञान की जगह अज्ञान युवाओं के मन–मस्तिष्क में डेरा जमा लेते हैं।

इधर कुछ समय से अनेक लेखकों, बुद्धिजीवियों ने केंद्र सरकार और संघ–भाजपा के विरुद्ध जो बखेड़ा खड़ा किया है, वह उन्हीं हानियों का ही एक रूप है। उनमें कुछ राजनीतिबाज हो सकते हैं, किन्तु अधिकांश तो अज्ञानवश ही हिंदू–विरोधी राजनीति के औजार बन रहे हैं। यह उदाहरण है कि बौद्धिक लड़ाई केवल राजनीतिक जोड़–तोड़ करते रहने से नहीं जीती जा सकती। उसका क्षेत्र, उपकरण और तरीका सब कुछ भिन्न है। युवाओं को समर्थ भारत बनाने के लिए इसे गंभीरता से समझना चाहिए।

अभी गिरीश कर्नाड द्वारा टीपू सुलतान की तुलना शिवाजी से करना उनका निजी अज्ञान नहीं है। ऐसे बयान तो पूरे देश की वैचारिक दुरावस्था के संकेत हैं। साथ ही, लंबे समय से चल रही एक सभ्यतागत बौद्धिक–राजनीतिक लड़ाई के उदाहरण भी। कर्नाड की बातें उसी क्रम में हैं जिसमें इधर कई बुद्धिजीवियों ने दादरी की घटना पर या कुछ और कहकर पुरस्कार वापस कर लड़ाई आरंभ की। इसे मुट्ठी भर बुद्धिजीवियों का प्रमाद भी कहा जा सकता है, किन्तु इसका देश–विदेश में प्रचार असीमित है, इसलिए यह विविध हानि करता है।

इस लड़ाई को सही तरीके से लड़ना युवाओं के लिए ही चुनौती बननी चाहिए। इतिहास की जानकारी न होना तथा उसके प्रति गलत दृष्टिकोण हमारे मानस पर दुष्प्रभाव डालता है। उसी से यहां राजनीति में हिंदू–विरोध मजबूत रहा है। उनके प्रतिवाद–स्वरूप कुछ कहो, तो उसे हिंदू 'असहिष्णुता' बताकर उलटे पीड़ित को ही पुनः चोट पहुंचाई जाती है। इन सबको विशेष रंगत देकर जो दुष्प्रचार होता है, उससे भारत की छवि भी बिगड़ती है। अतः वैचारिक सामर्थ्य बनाने के प्रति उदासीनता किसी तरह ठीक नहीं।

यह समझना होगा कि बाबर से लेकर टीपू तक के बारे में गलतफहमी फैलाने वालों में अज्ञानियों से लेकर राजनीतिबाजों तक हर तरह के लोग शामिल हैं। वे इसलिए भी कुछ भी अनाप-शनाप बोलते रहते हैं, क्योंकि उन्हें उनका अज्ञान दिखाया नहीं जाता। 'मत-वैभिन्य' के नाम पर आदर दे दिया जाता है। यह इतने लंबे समय से चल रहा है कि गलत को सही और सही को ही गलत मान लिया गया है।

टीपू सुलतान के घृणित, क्रूर इतिहास को बदलकर 'ब्रिटिश साम्राज्यवाद विरोधी योद्धा' का खिताब दे देना राजनीतिक कारस्तानी है। दुर्भाग्यवश यह स्वयं गांधीजी और उनके अखबार 'यंग इंडिया' ने शुरू किया था। इस कारनामे पर 14 अक्तूबर 1930 के 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में विस्तृत समीक्षा छपी थी। उसमें व्यंग्य-पूर्वक लिखा था कि 'यंग इंडिया' ने टीपू सुलतान की ऐसी विरुदावली गढ़ी, मानो वह कोई प्रारंभिक कांग्रेस कार्यकर्ता रहा हो। जबकि टीपू की कुख्याति हिंदुओं के घोर शत्रु के रूप में है। जिसने कुर्ग में एक ही बार में 70,000 हिंदुओं को बलात् इस्लाम में धर्मांतरित कर उन्हें गोमांस खाने पर भी मजबूर किया। मैसूर नगर और उसके राजमहल का विध्वंस किया। महल के पुस्तकालय में संग्रहीत बहुमूल्य पांडुलिपियों को जलाकर उससे अपने घोड़ों के लिए चने उबलवाए। बड़े पैमाने पर मंदिरों और चर्चों को तोड़कर नष्ट किया। उसी टीपू को गांधीजी अपने सत्याग्रही जैसी छवि देना चाहते हैं। इसीलिए, टाइम्स संवाददाता के अनुसार, उनके अखबार ने टीपू की एक मनगढ़ंत छवि बनाने की कोशिश की। लेकिन वही काम भारत में तब से लगातार चलता रहा है। उसी प्रभाव में, अज्ञानवश, गिरीश कर्नाड ने टीपू को सम्मानित करने की मांग की। इस तरह हिंदुओं के घावों पर नमक रगड़ने का काम किया। कर्नाड जाने-अनजाने एक हिंदू-विरोधी राजनीतिक दुष्प्रचार के माध्यम बन गए। इस प्रसंग से समझा जा सकता है कि किस तरह राजनीतिक उद्देश्यों से इतिहास का मिथ्याकरण करने की कोशिशें चलती रहीं, और उसके कितने घातक परिणाम होते रहे हैं।

यह दूसरी बात है कि भारत जैसे सांस्कृतिक, लोकतांत्रिक देश में इतिहास का पूर्ण मिथ्याकरण नहीं किया जा सकता। ऐतिहासिक ध्वंसावशेषों, काशी-मथुरा जैसे स्थलों पर हिंदुओं के लिए अपमानजनक प्रमाणों के अलावा लोक-कथाओं, संस्मरणों, कहावतों और साधु-संतों की कथाओं के माध्यमों से असंख्य लोग वास्तविक इतिहास भी जानते हैं। इसीलिए, गिरीश कर्नाड जैसे मिथ्या प्रवचनों का फल होता है कि सामुदायिक संबंध सहज होने के बदले उलटे संदेह-ग्रस्त बने रहते हैं। झूठ की भित्ति पर सदभाव नहीं बनाया जा सकता, हमें यह सबक सीख रखना चाहिए। इसलिए, प्रामाणिक सत्य जानना और विस्तार से जानना युवाओं का एक प्रधान दायित्व है। उन्हें समझना होगा कि इतिहास के प्रति अज्ञान सामाजिक वैमनस्य बढ़ाता है। उदारता के नाम पर मजहबी साम्राज्यवाद की मदद करता है। उन्हें यह भी जानना होगा कि लंबे समय से देश का बौद्धिक वातावरण एकतरफा बना रहा है। केंद्र में मोदी-सरकार बनने से इसमें कोई परिवर्तन नहीं आया। वैचारिक, सांस्कृतिक गलतियां और घात पूर्ववत् चालू हैं।

वास्तव में भारतीय समाज और हिंदू समाज पर्यायवाची जैसा है। किंतु इसे जबरन नकारकर सारी वैचारिक बहस हिंदू-विरोधी 'सेक्यूलर' मनोवृत्ति से चलाई जाती है। प्रभावशाली बुद्धिजीवी हिंदू धर्म-समाज और संबंधित चिंताओं के प्रति उदासीन या शत्रुतापूर्ण हैं और जाने-अनजाने चोट पहुंचाते रहते हैं। ऐसी बातों का उत्तर केवल आर्थिक विकास करने में नहीं है। विकास के सिवा सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय एवं शांति-सौमनस्य की पक्की व्यवस्था भी जरूरी है। यह वैचारिक-सांस्कृतिक लड़ाई का क्षेत्र है।

इस लड़ाई को जीतने और देश में फैले वैचारिक भ्रम को काटकर फेंकने के लिए युवाओं में ज्ञानी बनने की धुन होनी चाहिए। यह महती कार्य किसी शॉर्ट-कट से नहीं हो सकता। दूरगामी महत्त्व के इस कार्य के लिए सरकार से अधिक समाज को सचेष्ट होना है। दर्शन, साहित्य, इतिहास के प्रति अज्ञान और भारत की विशिष्ट धर्म-चेतना के प्रति उदासीनता से बड़ी हानि होती रही है। वैचारिक हमलों का निशाना तो मुख्यतः

हिंदू समाज है जो अपनी और अपने धर्म, दर्शन की उपेक्षा–अपमान बेबस देखता है। किंतु यह देश का भी अपमान है, जिसे समझना चाहिए। नेहरूवादी प्रभाव में यह बेरोक–टोक चलता रहा है।

जो बड़े बुद्धिजीवी और एक्टिविस्ट लोकसभा चुनाव से पहले संघ–भाजपा–मोदी पर गोले बरसा रहे थे, वे पुनः संगठित, सक्रिय हो गए हैं। लोक सभा चुनाव परिणाम से उपजी निराशा से उबरकर अब वे किसी न किसी बहाने ठीक वही दोहरा रहे हैं, जो विगत कई बरसों से उनका रिकॉर्ड है। राष्ट्रवादी संगठनों के सक्रिय कार्यकर्ताओं की संख्या हजारों में है, किंतु वे बौद्धिक लड़ाई की समझ, हथियार और तकनीक तीनों में अनुभवहीन दिखते हैं। देशभक्त युवाओं को इस कमी को दूर करने हेतु कटिबद्ध होना चाहिए।

वैचारिक और चुनावी लड़ाई को सुई और तलवार वाले भेद से भी समझ सकते हैं। वैचारिक लड़ाई वोटों की ताकत से नहीं लड़ी जाती। अपने कटिबद्ध निंदक बुद्धिजीवी को यह कहकर आप निरुत्तर नहीं कर सकते कि आपके पास जन–समर्थन है। आपके पास उसे उसी की भाषा में जवाब देने की तैयारी होनी चाहिए। यही नहीं, उस पर अपनी ओर से प्रहार करने की क्षमता और निश्चय होना चाहिए। वैचारिक प्रहार कर सकना एक जरूरी सामर्थ्य है, जो वैचारिक लड़ाई का स्वरूप तय करती है।

बहुतेरे राष्ट्रवादियों के पास इसकी कोई खास समझ नहीं है। कई तो आत्म–तुष्ट होकर विकास–एजेंडे की आर्थिक योजनाओं को लागू करने में लगे हुए हैं। वैचारिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक मोर्चे को उन्होंने लगभग खाली छोड़ दिया है। इसी का फल है कि जिन बुद्धिजीवी गिरोहों को अपने पिछले पापों के लिए लज्जित होना चाहिए था, वे पुनः ठसक से वही कर रहे हैं।

इससे स्पष्ट है कि तलवार से सुई का काम नहीं होता। किसी की चुनावी जीत उसकी बौद्धिक जीत भी तय नहीं कर देती। इसलिए देश–भक्त लोगों को अपना बौद्धिक मोर्चा उच्च–स्तरीय, गुणवत्तापूर्ण बनाने तथा मजबूत करने का लक्ष्य बनाना चाहिए। वैचारिक–सांस्कृतिक लड़ाई स्वभाव से ही अविराम होती है। साथ ही, इस में पहले प्रहार करने वाले को उसी तरह बढ़त मिलती है, जैसे खेल में टॉस जीतने वाले को। वह लड़ाई का स्वरूप तथा दिशा तय करने का अवसर पाता है। हमारे अनेक नेताओं ने इसे ठीक से नहीं समझा। उसी का खामियाजा हमें दशकों से बार–बार भुगतना पड़ा है। इन सब बिंदुओं पर ध्यान देकर हमारे युवाओं को अपना दायित्व समझना चाहिए।

(लेखक एनसीईआरटी में राजनीति शास्त्र के प्राध्यापक हैं)

जिस क्षण मैंने यह जान लिया कि भगवान् हर एक मानव शरीर रूपी मंदिर में विराजमान हैं, जिस क्षण मैं हर व्यक्ति के सामने श्रद्धा से खड़ा हो गया और उसके भीतर भगवान् को देखने लगा – उसी क्षण मैं बंधनों से मुक्त हूं, हर वो चीज जो बांधती है नष्ट हो गई, और मैं स्वतंत्र हूं।

(स्वामी विवेकानंद)

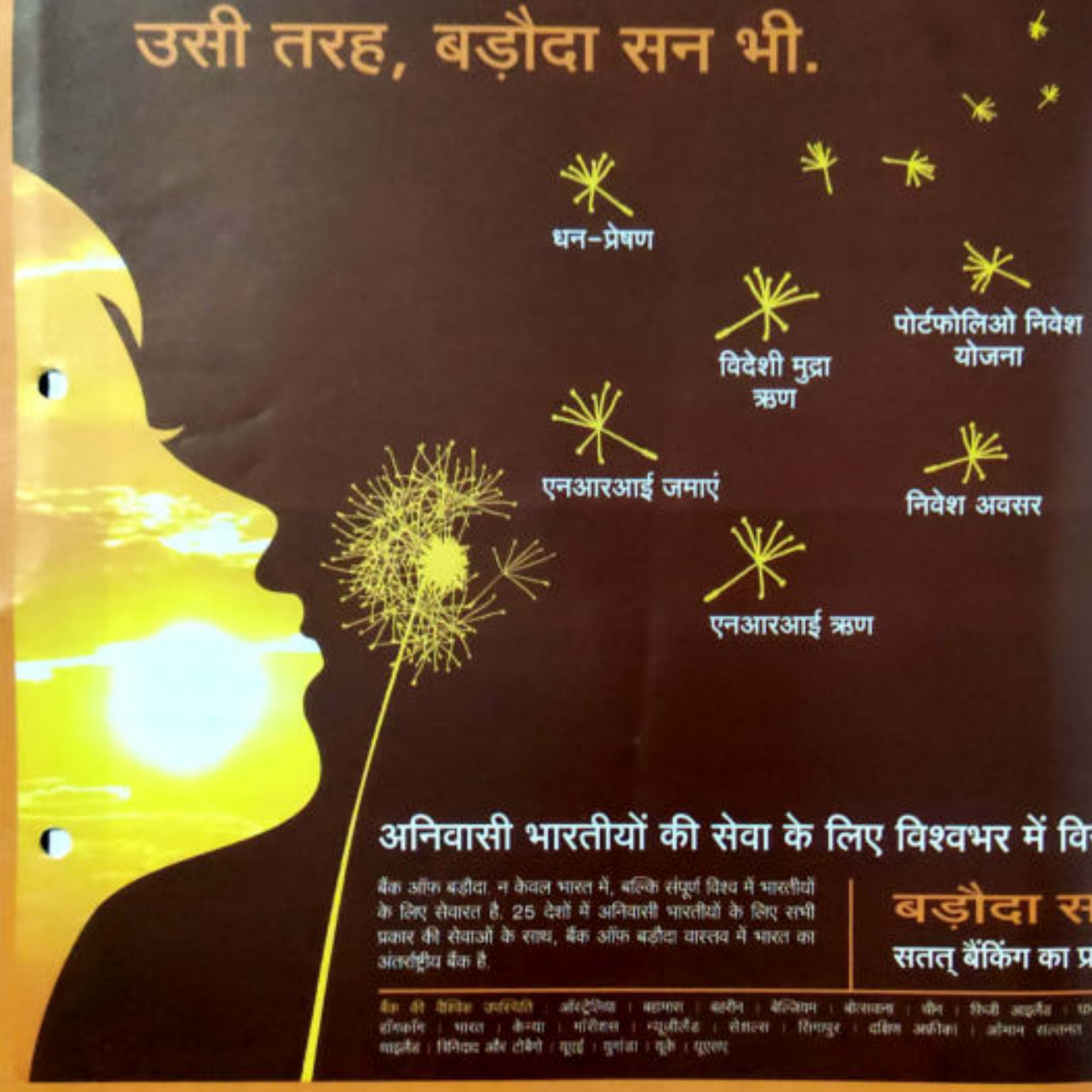

हर सुबह, सूरज सबके लिए
नई आशाएँ लेकर आता है
उसी तरह, बड़ौदा सन भी.
धन-प्रेषण
विदेशी मुद्रा ऋण
पोर्टफोलिओ निवेश योजना
एनआरआई जमाएं
निवेश अवसर
एनआरआई ऋण
अनिवासी भारतीयों की सेवा के लिए विश्वभर में विस्तार
बैंक ऑफ़ बड़ौदा, न केवल भारत में, बल्कि संपूर्ण विश्व में भारतीयों के लिए सेवारत है. 25 देशों में अनिवासी भारतीयों के लिए सभी प्रकार की सेवाओं के साथ, बैंक ऑफ़ बड़ौदा वास्तव में भारत का अंतर्राष्ट्रीय बैंक है.
बड़ौदा सन.
सतत् बैंकिंग का प्रतीक.
91-22-26520981
91-22-40768300
www.bankofbaroda.co.in
बैंक ऑफ़ बड़ौदा
Bank of Baroda
भारत का अंतर्राष्ट्रीय बैंक

परिवर्तन का अग्रदुत युवा

— सदाशिव देवघर

भारत एक प्राचीन देश! आज सर्वाधिक युवा देश है!! दुनिया के देशों में सबसे अधिक युवा संख्या भारत में है। इस कारण भी समर्थ भारत का सपना सभी देखते हैं। अर्थात् समर्थ भारत यानी महासत्ता नहीं, अपितु महान् राष्ट्र भारत! विश्वगुरु भारत!! महासत्ता सरकार द्वारा बनती है। परंतु महान राष्ट्र समाज द्वारा बनता है।

इस प्रक्रिया में तरुणों की भूमिका और योगदान का महत्त्व रहेगा। इस दृष्टि से इस देश में प्रथमतः सभी युवाओं को एक देशभक्त युवक ने आह्वान किया था। यह आह्वान स्वयं के विचार एवं कृतिशीलता से किया था।

स्वामी विवेकानंदजी ने कहा था, "उत्तिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत" स्वामीजी के समय और पूर्वकाल में भी देशस्थिति चिंताजनक थी। समाज राजनैतिक एवं मानसिक दासता में था। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक, राजनैतिक सभी क्षेत्रों में अंग्रेजी और अंग्रेजियत का भयंकर प्रभाव था। अंग्रेजी हुकूमत ठीक चले इसलिए शिक्षा दी या ली जाती थी। साधारण उच्चशिक्षित भी ब्रिटिश सत्ता के/सत्ताधारी के सामने घुटने टेकता था। नतमस्तक था।

भारतीय विचार, आचार, रीति–रिवाज आदि दकियानूसी हैं, अतएव त्याज्य हैं। इस भावना को बलवती बना दिया और जो भी अंग्रेजों का है सब उत्तम है। वही स्वीकारना होगा। यह भावना बढाई गई।

विदेशी ईसाइयत का प्रभाव अन्यान्य पद्धति से बढ़ाया गया। इससे प्रभावित बुद्धिजीवियों ने प्रार्थना समाज, ब्रह्मसमाज आदि पंथ प्रारंभ किए। सभी समाज का तेजोभंग करने के महत प्रयास चल रहे थे। समाज आत्मसामर्थ्य, आत्मसम्मान भूल गया। आत्मविस्मृत समाज पुरुष गहरी नींद मे था। "एक मिट्टी का ढेर" ऐसी समाज की स्थिति हुई थी। ऐसी स्थिति में स्वामी विवेकानंदजी ने कहा निद्रित समाज को आत्मसामर्थ्य का प्रत्यय देने में यानी जागृत करने में जीवन सार्थक होगा। इससे आगे मुक्ति की बात क्षुद्र है।

यह ध्यान में लेकर स्वामीजी का जीवन देखें, उनके द्वारा यह कार्य हो मानो यही ईश्वरीय इच्छा रही होगी। भगवान् रामकृष्णदेव ने नरेन्द्र को केवल एक ही बार समाधि की अनुभूति दी। बाद में एक बार कहा "नरेन्द्र तुम्हारा जीवन कार्य अलग है। वह समाज में जाकर करना है। देहोत्सर्ग के समय ही तुम्हें ऐसा समाधि अनुभव मिलेगा।" यह संकेत ईश्वरीय इच्छा का होगा। कभी–कभी लगता है, स्वामीजी का उस समय जन्म नहीं होता तो इस देश मे ईसाइयत का प्रभाव और प्रसार हो जाता ।

स्वामीजी के कुछ विचारों का चिंतन करना उन्हें समझने के लिए उपयुक्त होगा।

उन्होंने कहा था कि हर देश में समाज की अधोगति विकृत धर्मकल्पना से हुई है, मौलिक धर्म से नहीं। अधोगति का जिम्मेवार मनुष्य खुद है।

सर्वधर्म परिषद् (1893) में उन्होंने आह्वान किया – "My American Sisters and brothers"

सारा श्रोतृवर्ग भाव विभोर हो गया। तालियां ही तालियां। वास्तव मे "वसुधैव कुटुंबकम्", "स्वदेशी भुवनत्रयम्" इस भारतीय भावना का आविष्कार था।

उनके सारे भाषण का मुख्यतः सूत्र "रुचिना वैक्तिया हजकुटिला नाना पथ जुषाम! नृणामेकस्त्वमसि पयसा मर्णवइव", या " आकाशात् पतितंतोयं ..... केशवं प्रतिगच्छति" था और सर्वेऽपि सुखिनः संतु.....मां कश्चित् दुःख भाग्भवेत्" था। इसी मानसिकता के कारण भारत ने सामर्थ्य होते हुए भी किसी अन्य देश पर सैनिकी आक्रमण नहीं किया। अपितु सद्भाव से सांस्कृतिक संक्रमण किया।

स्वामी विवेकानंदजी के पूर्वकाल का और पश्चात् काल का भारत देखें तो उनका अलौकिक तत्व ध्यान में आता है।

आत्मविस्मृत, दासवृति के समाज में उन्होंने दैशिक स्वाभिमान के प्राण फूंके। इस देश का प्राचीन गौरवशाली इतिहास, तत्त्वज्ञान, जीवनदर्शन, ज्ञान–विज्ञान, तंत्र ज्ञान की प्राचीन संपदा, विश्वकल्याणात्मक विचार एवं व्यवहार की यादें जागृत कीं।

भारतीय पुनर्जागरण, पुनरुत्थान का प्रारंभ स्वामी विवेकानंदजी ने किया।

इस देश की आत्मा धर्म है, यह उनको ध्यान में आया। सही दृष्टि से धर्म का (मौलिक) पुनर्जागरण किया। समाजधर्म जगाया। स्वामीजी ने राष्ट्रीय उन्नति की संकल्पना पर, सामाजिक एकात्मकता की संकल्पना पर प्रथम बार संन्यास को सेवा और सामाजिक चेतना से जोड़ दिया। (राजनीति से नहीं)

इस संकल्पना के बारे में सभी गुरुबंधुओं से विचार–विमर्श पहले ही किया था। रामकृष्ण मिशन के प्रथम अध्यक्ष स्वामी विवेकानंद बने।

इस प्रकार देश और समाज के लिए संन्यासियों का संगठन करने वाले स्वामी विवेकानंद पहले भारतीय रहे। मिशन में संन्यासियों का भी सहयोग रहा।

उनकी अपेक्षा युवाओं से अधिक थी।

युवक के पास ऊर्जा, संघर्षशीलता, संवेदना, परिश्रमशीलता, सेवाभाव, समर्पण होता है। वह ज्ञानोपासक, बलोपासक रहता है। इस कारण उनका पहले आह्वान युवा वर्ग को था। मिशन का उद्देश्य एवं कार्य उन्हें परिव्राजक अवस्था में पैदल भ्रमण के समय अधिक स्पष्ट हुए। इस समाजदर्शन में स्वामीजी सभी तबकों के घरो में, रजवाड़ो में, झोपड़ी में रहे। श्रीमंत, गरीब, दरिद्री, मालिक, मजदूर सभी के साथ रहे। दीन, दलित, वंचितों के साथ समरस होकर दु:ख–दर्द की अनुभूति ली। सभी का सब प्रकार का आर्त–दर्द हृदय में समा लिया। मुट्ठी भर श्रीमंत लोगों के ऐशोआराम के लिए करोड़ों स्त्रीपुरुष दुर्भिक्ष्य के नरक मे, अज्ञान में, डूब रहा है, यह उन्होंने देखा। क्या वंचितों को ज्ञान, शिक्षा, संपत्ति मिलने से अवनति हो जाएगी? आखिर मुट्ठीभर श्रीमंतों से समाज बनता है या करोड़ों गरीबों से?

ऊंच–नीच, छुआछूत, महिलावर्ग की ओर निम्नदृष्टि और विकृत धर्मकल्पना आदि उन्हें भ्रमण में दिखाई दिया। अनेक प्रश्न मन में उभरे।

इस प्रकार की संवेदना स्वामीजी की संन्यास धर्म की प्रेरक शक्ति बनी। समाज का दैन्य, अज्ञान–अनारोग्य से अंतरमन व्यथित होना, फड़फड़ाहट महसूस होना यह प्रेरक शक्ति का लक्षण है। किसी भी परिवर्तन का प्रारंभ अंदर से होता है। इसीलिए कहा है, "मन एवं मनुष्य:"

अनेक संत, निस्वार्थी समाज सेवक, क्रांतिकारी, देशभक्त जिन्होंने समाज में देश में, ठीक दिशा मे परिवर्तन के प्रयत्न किए उनकी उत्प्रेरक शक्ति राष्ट्रीय / सामाजिक संवेदना ही थी।

आज के युवावर्ग को इन सब बातों को ध्यान में लेना होगा। और अपने देश और समाज की स्थिति कैसी है? इसका अध्ययन करना होगा। अपनी मिट्टी, समाज का विचार करते हुए इस भूमि के लिए उचित नैसर्गिक उत्तर ढूढने होंगे। उत्तर अनुभव, अनुभूति से अतंर्मन से मिल सकता है।

आज अपने देश में अन्न, वस्त्र, आवास, शिक्षा, आरोग्य, योगक्षेम (व्यवसाय, उद्योग, नौकरी) राजनीति, पर्यावरण आदि आवश्यकताओं की स्थिति क्या है?

सभी क्षेत्र में विदेशियों का हस्तक्षेप कितना है ?

हायब्रीड बीज, विदेशी बीज के द्वारा भारतीय खेती का नाश कर रहा है। स्वयं बलि राजा (किसान) बलि चढ रहा है (आत्महत्या)।

झोपडपट्टियां बढ रही हैं। आसमान छू रही घरों की कीमत इसका कारण है।

बिल्डर्स लॉबी, सरकारी अधिकारी और सत्ताधारी/अन्य राजनेताओं को मालामाल करके जेब में रखते हैं। गरीब श्रीमंत में कितनी भयंकर दूरी। अधिकतम और न्यूनतम वेतन कमाने वालों के वेतन में कितना अंतर? पूंजीपति देशों में भी इतना अंतर नहीं। शायद केंद्रीय मंत्री आर्थिक घोटालों में नहीं होंगे। बाकी मंत्रीगण, सभी पार्टी के नेतागण, सरकारी अधिकारी, शिक्षा संस्थान, बैंकिंग, सहकार आदि को देखें, क्या अनुभव है? भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार !

देहातों का सब प्रकार से शोषण करके शहर, नगर/महानगरों का पोषण हो रहा है।

अमेरिका में नहीं, परंतु यहां दुहरी शिक्षा! गरीबों के लिए अलग, श्रीमंतों के लिए अलग! अधिक इंटरनेशनल स्कूल! नेशनल बहुत कम! दुनिया में एकमात्र भारत देश ऐसा है कि जिसकी अपनी भाषा ही नहीं! प्रादेशिक भाषाओं को समाप्त करके अंग्रेजी, अंग्रेजियत को बढ़ावा।

इतना होते हुए भी यहां मौलिक बुद्धिमता कितनी है? सिलीकॉन वैली में प्रभाव, परंतु भारतीय शोध, संशोधक कहीं भी नहीं दिखते।

परंतु 1200 वर्षों पूर्व भारत के अनेक शोध, संशोधन, संशोधक इनका दुनिया में प्रभाव था। वह भी तब, जब अंग्रेजी भाषा/विद्या यहां शून्य थी। वह थी मौलिक/मूलभूत प्रज्ञा!

शून्य का शोध, गणित, रसायन, धातु, स्थापत्य, वस्त्र, योग, आयुर्वेद, संगीत, कला, साहित्य, आदि क्षेत्रों में भारतीयों ने अपना नाम स्थापित किया।

शिक्षित लोगों को दैनंदिन देशभक्ति का साधारण व्यवहार भी करना नहीं आता। रास्तों के, स्वच्छता के नियम तोड देते हैं।

आज की स्थिति में बहुत लोगों को "हम कौन हैं" मालूम नहीं !

भारतीय संस्कृति, सभ्यता, अपना गौरवशाली इतिहास और पूर्वज आदि की जानकारी नहीं! अर्थ की दृष्टि से अत्यंत जागृत समाज है। यहां बुद्धयांक बढ़ाने के लिए बहुत व्यवस्था है। केंद्र हैं। ट्यूशन क्लासेस हैं, इनसे अच्छे यंत्र मानव खडे हो रहे हैं। परंतु भावनांक कम हो रहा है।

"मनुष्य" बनने के लिए समुपदेश केंद्र–काउंसेलिंग सेंटर्स ढूंढने पडते हैं। आरोग्य क्षेत्र में भी लूट ही लूट! मेडिकल प्रवेश के लिए प्रचंड डोनेशन। इससे लूट की शुरुआत, डॉक्टर बना व्यक्ति सारा पैसा वसूल करने के पीछे पडता है। एक समय डॉक्टर यानी ईश्वरीय अंश यह प्रतिमा थी। आज डॉक्टर यानी लुटेरा, कसाई यह प्रतिमा बनी है।

डोनेशन के कारण शिक्षा, भ्रष्टाचार का अपसंस्कार दे रही है।

आज पढ़े लिखे लोग भी नागरिकता के स्वाभाविक नियम भूल रहे हैं। नित्य जीवन में देशभक्ति का दर्शन होना चाहिए, होता नहीं! स्वच्छता अभियान ठीक है, परंतु अभियान की आवश्यकता क्यों हुई ?

शिक्षित, पैसेवालों के यहां कचरा अधिक! ऐसा क्यों ?

केंद्र सरकार के मंत्रीगण आर्थिक घोटालों मे शामिल नहीं होंगे! अच्छा है। परंतु प्रांतों के मंत्रीगण, सभी प्रकार के सरकारी अधिकारी, राजनेता, विविध प्रकार की संस्थाएं, कर्मचारी आदि कितने स्वच्छ हैं ? भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार बन गया है।

तस्कर, भ्रष्टाचारी, अपराधी, दहशतवादी आदि समाजद्रोही मंडली के खिलाफ न्यायालय में जाए तो न्यायदान की कूर्मगति! यहां कहीं पुलिस, कानून का भय ही दिखाई नहीं देता।

आज पूरे देश में कितने "निर्भया" कांड हो रहे हैं और बढ़ रहे हैं। फांसी की सजा का प्रावधान होने के बाद भी बढ रहे हैं।

सारे प्रसार माध्यमों में स्त्री देह का भयंकर शोषण! हर व्यक्ति में राम और रावण की प्रवृत्ति रहती है। प्रसार माध्यम वासनामय रावण प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं। कुछ मात्रा में व्यक्ति स्वातंत्र्य का संकोच, उस पर अंकुश! उदाहरण–गुटखा, तंबाकू, शराब पर निर्बंध! समाज स्वास्थ्य के लिए निर्बंध! ठीक! परंतु प्रसार माध्यमों पर निर्बंध नहीं।

ईश्वर निर्माता है, वैसे स्त्री निर्मात्री है। इस मातृस्वरूपा ईश्वरी अंशों को–स्त्री को–माध्यमों ने उपभोग की वस्तु मानकर बाजार में खड़ा किया है। और ऊपर से महिलाओं पर के अत्याचार के लिए घड़ियाली आंसू!

कितने भारतीय माध्यमों में सामाजिक दायित्व बोध का दर्शन होता है? इस कारण भी कुटुंब जीवन पर दुष्प्रभाव पड़ रहा है।

आज महिला, मजदूर, किसान, छात्र आत्महत्या कर रहा है। समाज संघर्षशीलता भूल रहा है। यह जीवंत समाज के लिए चिंता का विषय है। ऐसे समय ब्रिटिश विचारवंत उपन्यासकार अल्डस् हॅक्सले की **'द ब्रेव न्यू वर्ल्ड'** उपन्यास ध्यान में आती है। उनका सूत्र है कि "आगामी काल में पूंजीपति, माध्यम और कुछ राजनेता समाज की विचार करने की क्षमता क्षीण करेंगे। धीरे–धीरे समाप्त करेंगे। समाज को जो भी चल रहा है, अच्छा लगेगा। दुःखी समाज और समाज का दुःख सामने आएगा ही नहीं।" आज भारतीय दूरदर्शन के अनेक चैनल्स, अत्यधिक पत्र/पत्रिका देखकर लगता है, भारत में सब मालामाल हैं! दुख कहां है?

देश में धर्म की भी विकृत कल्पनाएं अधिक हैं। राजनीति, चुनाव आदि कारणों से सांप्रदायिक, जातिगत, अंतर बढ़ता है, बढ़ाया गया। ईर्ष्या तिरस्कार दिखाई देता है। धर्म के नाम पर भी क्या चला है? सभी देवी–देवताओं का मार्केटिंग, बाजारीकरण। सब प्रकार के धार्मिक उत्सवों में बलपूर्वक चंदा वसूली, पर्यावरण का नाश, पैसों का भद्दा प्रदर्शन, नाच गाना, डॉल्बी, नागरिकों को तकलीफ, महिलाओं से छेड़खानी, गणेशोत्सव, देवी उत्सव, जन्माष्टमी, रामजन्म आदि में धर्म कहां कितना दिखाई देता है।

वैसे ही विवाह आदि संस्कार में धर्म कितना बचा है? अन्न, पर्यावरण का नाश, पैसों का उद्दाम प्रदर्शन, शराब, रास्ते पर भोंडा नाच–गाना, कहां है धर्म ?

आज भी छुआछूत, मंदिर प्रवेश बंदी, भ्रूण हत्या, दहेज आदि कुप्रथाएं ध्यान में आती हैं।

पहले बच्चे अनाथ दिखाई देते थे। आज बुजुर्ग स्त्री–पुरूष भी अनाथ दिखाई देते हैं। यह सामाजिक स्वास्थ्य का लक्षण नहीं। और दुःख की बात है, इस सारी पद्धतियों को ठीक रास्ते पर लाने का कार्य कहीं दिखाई नहीं देता है (कुछ अपवाद को छोड़कर)। कोई साधु–संत, मठ, आश्रम, धार्मिक संस्था, संगठन इस विषय में ठोस कुछ नहीं कर रहा है।

भारतीय कुटुंब व्यवस्था यह अपने समाज की शक्ति है। इतने आक्रमण झेलते हुए भी हमारी संस्कृति जिंदा है, इसका मुख्य कारण परिवार संस्था है। यह संस्था भी डुलमुल हो रही है। या इसकी अंगभूत शक्ति ध्यान में आने से कुछ विदेशी और स्थानीय समाजद्रोही शक्तियां परिवार संस्था को डुलमुल कर रही हैं। इसे हम सभी को समझना होगा।

इस देश का राजनैतिक क्षेत्र भी संभ्रमावस्था में है। प्रधानमंत्री सबको साथ लेने का प्रयास करते हैं। विपक्ष अपने क्षुद्र कारणों से साथ नहीं देते। राजनीति में विचार, निष्ठा, चिंतन, परस्पर सहयोग, "राष्ट्र प्रथम" यह भाव अधिक से अधिक कम हो रहा है।

अभ्यास, अध्ययनशील, बहुमुखी ज्ञानी, प्रामाणिक राजनेता ढूंढना होगा। विचार भाषणों में गहराई विरल हो रही है। राजनैतिक अस्पृश्यता बढ़ रही है। चुनाव पद्धति के कारण जीतने के लिए धन (चाहे काला) और बल आवश्यक है।

आज महात्मा गांधी भी होते तो ग्राम पंचायत का चुनाव नहीं जीत सकते। कुछ राजनेता स्वयं अपराधी और अपराधियों के तारणहार है। दहशत का संकट भयंकर है।

इसमें और एक चिंता की बात है यानी इस देश में सर्वमान्य नेतृत्व/जो सबको साथ लेकर चल सके ऐसा कोई व्यक्तित्व नहीं। जैसे कि पहले जेपी, नानाजी देशमुख, अटलजी के रूप थे। समग्र समाज हित का विचार, राष्ट्रीय या सामाजिक चेतना का विचार जैसे लोकशिक्षण अपने देश में हुआ ही नहीं। समाजधर्म की शिक्षा कभी मिली नहीं। केवल व्यक्तिधर्म बढ़ता गया। आज भी मनुष्य का यंत्र मानव बनने के लिए अनेक साधन, प्रशिक्षण केंद्र/कांउसेलिंग सेंटर्स है। इससे बुद्धयांक बढ रहा है। परंतु "मानुस" बनने के लिए कांउसेलिंग सेंटर्स ढूंढने पड़ते है। इस कारण आज भावनांक कम हो रहा है।

घर परिवार एक संस्कार केन्द्र (अच्छी आदतें सीखने का) था। आज उसका भी स्वरूप बदल रहा है। घर में संस्कारों का अभाव है। तो रास्तों पर संस्कार दर्शन कैसे होगा ?

यह सब देश/समाज का वर्तमान है। परंतु गर्व की बात यह है कि देश सर्वाधिक तरुण है। चुनौती को स्वीकार करने वाला ही युवा होता है। समाज में कुछ प्रश्न होते हैं, कुछ प्रश्न निर्माण करते हैं। परंतु कुछ प्रश्नों का उत्तर बनते हैं, वह ऊर्जावान युवक होता है।

जो सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय चेतना–दायित्व बोध की दृष्टि से संवेदनशील होता है। अन्याय, अत्याचार के खिलाफ यथाशक्ति संघर्ष करता है, वही मनुष्य होता है।

स्वामी विवेकानंदजी मैन मेकिंग एडुकेशन चाहते थे।

भारतीय तरुण बुद्धिमान है, खुद प्रयास एवं पुरखों से आई विद्वता के कारण उसने दुनिया के बौद्धिक आकाश में अपना स्थान जमाया है। देश/विदेश में शिक्षा ली है। अनेक विद्याशाखाओं में गतिमान है। विद्वता, परिश्रमशीलता, ज्ञानलालसा, विभिन्न समाज में समरसतापूर्ण व्यवहार आदि के कारण विदेश में भी अनेक बड़ी कंपनी में आह्वानात्मक स्थानों पर दायित्व निभा रहा है। विदेशों में राजकीय/प्रशासकीय क्षेत्र में भी कार्यरत है। ऐसे भारतीयों की चाह बढ़ रही है।

दुनिया में सामाजिक प्रसार माध्यमों का सर्वाधिक प्रयोग भारतीय युवा करते हैं। फिर भी आज सारी स्थिति समाधानकारक/आनंददायी नहीं है।

इतने सारे प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिए स्वामीजी के चरित्र का बारीकी से अध्ययन करना होगा। उनके काल में भी भयंकर समस्या थी। विदेशी हुकूमत, सब प्रकार के निर्बंध, निद्रित समाज, दारिद्र्य, अनारोग्य, अनेक कुप्रथाएं आदि। इस स्थिति में वे प्रकाश की किरण लाए, देश को जगाया।

उनके पास जिज्ञासा थी। परिभ्रमण काल में जो समाज दर्शन किया, उससे वह अस्वस्थ थे। उस समय के कुछ प्रसंग, घटना सभी जानते हैं।

एक मेहतर का हुक्का पीने का प्रसंग, खेतड़ी में संगीत सभा का महाराजा द्वारा आयोजन, एक नर्तकी का कवि सूरदास के भजन का गायन, संथाल मजदूर केश्वा के साथ बातचीत, मठ में संथालों के साथ भोजन और अमेरिका में एक बार अतिश्रीमंत व्यक्ति के घर निवास था। देर रात्रि तक नींद नहीं! अचानक खिड़की खोली, मन चक्षु के सामने आसेतु हिमालय तक का भारत दर्शन! अपना गरीब, पददलित समाज देख रहे थे। देखते देखते रो पड़े। "स्वर्गादिपि गरीयसि" ऐसी मातृभू के संतानों की दयनीय स्थिति! ऐसी घटना, प्रसंगों ने स्वामीजी को– नरेन्द्र को झकझोर दिया। वह अंतर्मुख हो गया। रामकृष्ण के शब्द याद आ गए "नरेन्द्र तुम्हारा जीवन कार्य अलग है, समाज में है।"

शिकागो परिषद् के पश्चात् प्रथम चेन्नई बंदरगाह पर उतरे और मातृभूमि का तिलक लगाया, उसे साष्टांग प्रणिपात किया। भारत भक्ति! एक पत्रकार कुछ धार्मिक चर्चा करने आए थे। उन्होंने कहा, "इस देश में एक कुत्ता भी भूखा सोता है तो उसकी चिंता करना मेरा धर्म है, इसके सामने मुक्ति की बात गौण– दुय्यम है।"

आज तक हिंदू समाज में 2 शब्द ही मालूम है। संन्यास एवं मुक्ति! इसी में मुख्य दोष है। क्या गृहस्थाश्रम के लिए कोई ध्येय नहीं है। भारत के राष्ट्रीय जीवन प्रवाह का उद्गम त्याग भावना में है। सेवा और भक्ति यह सर्वोत्कृष्ट आकांक्षा है। मैंने जीवन में कोई भी निर्णय करते समय व्यक्ति विचार को दूर रखा तभी निर्णय ठीक हुए। वेदांत का सही रहस्य ज्ञानोपासना, बलोपासना में है। "तेन त्यक्तेन भुंजीथा" इसी सूत्र में है।

स्वामीजी ने अनेक संतों जैसा ही अनुभव किया। सदगुरू से यही पाथेय मिला। "जन में जर्नादन" देखा। अब आगामी कुछ वर्ष भारत माता ही देवता है। बाकी देवी देवताओं को भूल जाओ, चलेगा।

हिंदू समाज में विवाह व्यक्तिगत सुख के लिए नहीं होते, अपितु राष्ट्र और ज्ञानी के अभ्युदय के लिए होते हैं। आज सभी ने "हम कौन है?" का विचार करना चाहिए।

इतने आक्रमणों के बावजूद हमारी संस्कृति, समाज, देश जिंदा है। क्यों?" कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी" इस रहस्य को जानना होगा। आज अनेक देश और समाज अपना उद्गम–मूल ढूंढ रहे हैं हम भी ढूंढने का प्रयास करें। हमारे अभियान की / गर्व की बातें क्या है? हमारी पहचान क्या है? या हम चेहरा विहीन समाज हैं?

आज हम कुछ पहचान के साथ जिंदा है। इसके पीछे किन महापुरुषों का योगदान है उनके जीवन के बारे में अध्ययन की जरूरत है।

"मेरा रंग दे बसंती चोला....." कहते–कहते, हंसते–हंसते फांसी पर क्यों चढ़ गए? वे भी व्यक्तिगत गुणवान, बुद्धिमान थे।

सर जगदीश चंद्र, रामानुजम ने कष्ट सहन करते हुए देश का नाम उज्ज्वल किया। पू. आंबेडकरजी ने सभी प्रकार का दुःख, अपमान झेलते हुए अपना गुणवत्तापूर्ण जीवन क्यों समर्पित किया?

भगिनी निवेदिताजी, ख्रिस्ताइन आदि विदेशी शिष्यमंडली स्वामी विवेकानंदजी के कहने पर सुखासीन जीवन त्याग कर क्यों आई? भगिनी निवेदिता का तो जगदीशचंद्रजी के नोबेल पुरस्कार प्राप्त शोधकार्य में प्रत्यक्ष सहभाग था।

अपने देश बंधुओं की सेवा करने हेतु आज भी चर्च से प्रेरित उच्चशिक्षित विदेशी भारत में फादर बनकर आते हैं।

अपने देश के भी कुछ संगठन, व्यक्ति, युवक विभिन्न प्रकार के सामाजिक / दैशिक कार्य में योगदान दे रहे हैं। परंतु यह पर्याप्त नहीं है। राष्ट्र एवं समाज जीवन के विविध क्षेत्रों का अध्ययन करना होगा। इससे हमें इस जीवन के सकारात्मक पहलू (गुण) ध्यान में आएंगे। नकारात्मक पहलू (दोष) भी ध्यान में आएंगे। समस्या समझ में आएगी।

इनका उत्तर ढूंढने के लिए हर कोई अपना शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक सहयोग दे सकता है। हर कोई संन्यासी बन नहीं सकता और आवश्यकता भी नहीं है। परंतु "मैं नहीं तू ही या नेशन फर्स्ट" विचार करते हुए यथाशक्ति अपना योगदान इस कार्य में दे सकता है।

समाज / राष्ट्र की पृष्ठभूमि (बैक ड्रॉप) पर अपने जीवन नाट्य का नैतिकता के साथ मंचन करने वाले युवाओं की अधिक आवश्यकता है।

(लेखक अभाविप के पूर्व राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री हैं तथा वर्तमान में वनवासी कल्याण आश्रम में वरिष्ठ प्रचारक हैं)

SHIRTS | TROUSERS | T-SHIRTS | PYJAMAS | BERMUDAS | LADIES WEARS | KIDSWEARS

Shop on line

www.ttgarments.com

Phone / E-mail / Website:
1800 1035 681 Toll Free
export@tttextiles.com
www.tttextiles.com

Follow us on

is a world famous globally well known Multi Product Brand selling in 65+ countries Since 1964

भारतीय भाषाएं और युवा पीढ़ी के मानवीय अधिकारों का प्रश्न

– डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री

पिछले दिनों उत्तराखंड के नगर रुड़की में स्थित आई.आई.टी (भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान) ने अपने पचास से भी ज्यादा छात्रों को बाहर का दरवाजा दिखा दिया। संस्थान का कहना है कि यह छात्र पढ़ाई–लिखाई में बहुत पिछड़े हुए हैं। यहां का कोर्स पूरा कर पाना इन छात्रों के बस का काम नहीं है। छात्र अपनी फरियाद लेकर राज्य के उच्च न्यायालय के पास भी गए, लेकिन न्यायालय ने भी इन छात्रों को कोई राहत नहीं दी (वैसे अब संस्थान ने इन छात्रों को दयावश एक मौका परीक्षा पास कर लेने के लिए और दे दिया है)। अब प्रश्न यह है कि क्या यह सभी छात्र पढ़ने–लिखने में सचमुच इतने निकम्मे हैं, जितना संस्थान बता रहा है? संस्थान के इस तर्क को प्रथमदृष्टया तो स्वीकार नहीं किया जा सकता। क्योंकि यह संस्थान अपने यहां किसी को बिना बौद्धिक जांच पड़ताल के प्रवेश नहीं देता। प्रवेश से पहले यह ठोक–पीट कर स्वयं जांचता है कि छात्र योग्य हैं या नहीं? यदि योग्य हैं तभी उसे अंदर आने दिया जाता है। लेकिन कुछ महीने बाद संस्थान स्वयं इन छात्रों को अयोग्य और निकम्मा बता रहा है। अगर किसी एक छात्र के बारे में संस्थान निकम्मा होने का फतवा जारी करता तो बात समझ में आ सकती थी। असली सिक्कों के बीच धोखे से एक–आध खोटा सिक्का भी चला ही जाता है। परंतु यहां तो संस्थान बता रहा है कि पूरी गुल्लक ही खोटे सिक्कों से भरी पड़ी है। लेकिन ऊपर के तर्कों के बल पर ही संस्थान को कटघरे में खड़ा नहीं किया जा सकता। क्योंकि संस्थान के पास तो पुख्ता प्रमाण है। इन छात्रों को पढ़ाने के बाद बार–बार परीक्षा ली गई। लेकिन परिणाम हर बार एक ही आया। यह सभी परीक्षा में बुरी तरह फेल हो गए। संस्थान का यही तर्क सभी पर भारी पड़ता है। जब छात्र परीक्षा में पास ही न हो पाए तो संस्थान बेचारा क्या करे? संस्थान ने इन छात्रों को प्रवेश दिया, इससे ही यह सिद्ध होता है कि यह छात्र योग्य हैं। लेकिन वही छात्र बार–बार फेल हो रहे हैं, इससे यह सिद्ध होता है कि वे छात्र अयोग्य हैं। इन दोनों ध्रुवों के बीच की पहेली को सुलझाना जरूरी है।

इन छात्रों का शैक्षिक रिकार्ड तो बहुत बढ़िया है लेकिन इनमें से ज्यादा की पढ़ाई–लिखाई हिंदी माध्यम से हुई है। दसवीं–बारहवीं तक छात्रों को आम तौर पर किसी भी भारतीय भाषा में पढ़ने–लिखने की सुविधा प्राप्त है। इस सुविधा का लाभ यह हुआ कि गांव के, पिछड़ी जातियों के, सामान्य परिवारों के बच्चे भी अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने लगे हैं और ताल ठोंककर उन लोगों के साथ आकर खड़े हो जाते हैं जिन्होंने सभी सुविधाओं का उपभोग करते हुए अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पढ़ाई की है। कबीर ने कहा भी है, 'मोल करो तलवार का पड़ा रहन दो म्यान'। भाषा के म्यान को परे रखकर जब केवल ज्ञान का मोल किया गया था तो यह छात्र भी दूसरों के समकक्ष आ खड़े हुए थे। लेकिन दुर्भाग्य से रुड़की के इस संस्थान में दाखिल हो जाने के उपरांत, वहां फिर म्यान को लेकर ही चर्चा होने लगी। जिस भाषा में संस्थान इन लड़कों को इंजीनियरिंग पढ़ा रहा था, वह भाषा इन छात्रों के पल्ले नहीं पड़ रही थी और जिस भाषा में यह छात्र इंजीनियरिंग समझना चाहते थे, उस भाषा में न पढ़ाने की अपनी जिद पर संस्थान अड़ा हुआ था। किस भाषा में पढ़ना है, इस विषय पर निर्णय लेने का अवसर आता है, तो हमारे देश में निर्णय करने की ताकत संस्थान के पास है, छात्र के पास नहीं। यह हमारी शिक्षा पद्धति की आंतरिक विसंगति है जिसने न जाने कितने क्षमतावान छात्रों का जीवन लील लिया है। उनकी बौद्धिक क्षमताओं को कुंठित कर दिया है। जब किस भाषा में छात्र को पढ़ना है, इतना ही नहीं बल्कि किस भाषा में उत्तर देना है, इसका निर्णय संस्थान को करना था, तो उसका जो परिणाम निकल सकता है, वही निकला। छात्र लगातार फेल होते गए और संस्थान अपनी जीत के जश्न

मनाता रहा। कई समाजों में जीत के जश्न पर बलि देने की परंपरा है। इसलिए संस्थान ने अपनी जीत के अनुष्ठान में इन छात्रों को बाहर निकाल नर–बलि देने का कर्मकाण्ड भी पूरा कर लिया।

इस नरबलि से बचने का इन छात्रों के पास एक ही रास्ता था कि वे उच्च न्यायालय में गुहार लगाते। लेकिन इन छात्रों के धैर्य और गुरुभक्ति की दाद देनी होगी कि न्यायालय के पास भी दया की भीख मांगने के लिए ही गए कि संस्थान हमें परीक्षा देने का एक और अवसर प्रदान कर दे, बस इतना ही। हम एक बार फिर संस्थान की भाषा में बोल पाने और लिख पाने में सक्षम बनने के लिए जी–जान लगा देंगे। इन छात्रों ने यह नहीं कहा कि संस्थान ने अपने भीतर ही बीमारी के कीटाणु संभालकर रखे गए हैं, जो प्रतिभावान छात्रों को भी एक–आध सत्र में ही पंगु कर देते हैं। उनमें हीन भावना भर देते हैं जिसके कारण वे अपनी बौद्धिक क्षमताओं के अनुरूप जीवन में लंबी छलांग लगाने में नकारा हो जाते हैं। न्याय तो अंधा होता है। उसने संस्थान के पक्ष में ही फैसला देना था। उसके लिए निर्णय करने के लिए यह विषय है ही नहीं कि छात्र को अपनी भाषा में पढ़ने–लिखने का अधिकार है या नहीं। उसके लिए देखने का विषय केवल इतना ही है कि संस्थान के मापदंडों पर छात्र पूरे उतरते हैं या नहीं? यह अलग बात है कि यह मापदंड उन विदेशी साम्राज्यवादी शासकों ने अपने हितों के लिए निर्धारित किए थे, जिन्होंने 200 साल इस देश पर राज किया और अब उन्हें यहां से गए भी सात दशक हो गए हैं। जैसा कि मैंने ऊपर लिखा है जब छात्र सब जगह से हार गए तब संस्थान ने तरस खाकर उन्हें परीक्षा उत्तीर्ण करने का एक और अवसर दे दिया। लेकिन जिन कारणों से यह प्रतिभाशाली छात्र फेल हो रहे थे, उन कारणों को संस्थान ने बदलना तो दूर, उन पर गौर करना भी उचित नहीं समझा।

अध्यापन का सबसे उत्तम तरीका अध्यापक की संप्रेषणीयता है। अध्यापक के पास जो ज्ञान है, वह उसको ठीक तरीके से अपने छात्र तक पहुंचा दे। इस काम के लिए भाषा माध्यम या साधन का काम करती है। जाहिर है अध्यापक की भाषा वही होनी चाहिए जो उसके शिष्यों की भाषा हो। यदि शिष्य और गुरु की भाषा अलग–अलग होगी तो ज्ञान संप्रेषण का प्रवाह अवरुद्ध हो जाएगा। रुड़की का यह संस्थान राजकीय संस्थान है। वह आम आदमी के पैसे से चलता है। उसी आम आदमी के पैसे से जिसकी भाषा को संस्थान के प्रवेश द्वार पर ही रोक दिया गया है। आम आदमी से संस्थान को चलाने के लिए पैसा तो लिया जा रहा है, लेकिन उसे उसकी भाषा में पढ़ाने को यह संस्थान तैयार नहीं है।

संस्थान में अंग्रेजी भाषा में ही पढ़ाए जाने की नीति के पक्षधर यहां एक तर्क दे सकते हैं कि संविधान की सूची में तो अनेक भाषाओं को दर्ज किया गया है, इसलिए कल कोई छात्र आकर कह सकता है कि उसे तमिल में पढ़ाया जाए, दूसरा कह सकता है मुझे पंजाबी में पढ़ाया जाए, तीसरा हिंदी की मांग करेगा और चौथा असमिया की। इस प्रकार तो संस्थान में अराजकता फैल जाएगी। ऊपर से देखने पर यह तर्क भारी भरकम लगता है। इसके नीचे बाकी सारी बहस दब सकती है। लेकिन यह तर्क ऊपर से जितना भारी दिखाई देता है, भीतर से उतना ही खोखला है। किसी भी राजकीय संस्थान को दो भाषाओं में पढ़ने की अनुमति तो देनी ही होगी। पहले उस प्रदेश की भाषा जिसमें संस्थान स्थित है और दूसरा हिंदी, क्योंकि वह संविधान के अनुसार राजभाषा है। उदाहरण के लिए जो भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान तमिलनाडु में है, उसे तमिल और हिंदी में पढ़ने–पढ़ाने का अधिकार तो देना ही होगा। इसके अतिरिक्त वह जितनी ज्यादा भाषाओं में अध्यापन की सुविधा प्रदान कर सकता है, वह उसकी उदारता मानी जाएगी। रुड़की का यह संस्थान हिंदी भाषी प्रदेश उत्तराखंड में स्थित है। अतः यहां तो छात्रों को हिंदी में पढ़ने–लिखने का और भी ज्यादा अधिकार है।

कुछ अति बुद्धिजीवियों ने छात्रों की जाति तलाशना शुरु कर दिया है। अपनी तलाश में उन्होंने पाया कि अधिकांश छात्र अनुसूचित जातियों के हैं। बस, उन्होंने अपना वही पुराना राग अलापना शुरु कर दिया। अनुसूचित जातियों के छात्रों से अन्याय और जो लोग अनुसूचित जाति के छात्रों से खार खाए रहते हैं, उन्होंने भी मोर्चा संभाला। हमने तो पहले ही कहा था कि अनुसूचित जातियों के लिए सीटें आरक्षित करके

आइआइटी जैसे उच्च शिक्षा संस्थानों की गुणवत्ता मत बिगाड़ो। ये लोग यहां चल नहीं पाएंगे। दरअसल दोनों ही पक्ष उन्हीं साम्राज्यवादी हितों की रक्षा कर रहे, जिन हितों की रक्षा की जिम्मेदारी इन्हें गोरे प्रभु सौंप गए थे। इनका तरीका अलग–अलग है और ऊपर से परस्पर विरोधी भी मालूम पड़ता है, लेकिन उद्देश्य दोनों का एक समान ही है। मारो कहीं, लगे वहीं। अपनी भाषा में पढ़ने के अधिकार की तर्कसम्मत लड़ाई को इन्होंने जाति की लड़ाई में बदल दिया। ध्यान रहे आइआइटी में अनुसूचित जाति के जिन छात्रों को प्रवेश मिलता है, उनकी शैक्षिक उपलब्धियां किसी से कम नहीं होतीं। वे भी मुकाबले की लड़ाई जीतकर ही यहां तक आ पाते हैं। यह अलग बात है कि यहां उनकी घेराबंदी की पूरी व्यवस्था है। वे कबड्डी में यानी अपनी भाषा में पढ़ने लिखने में माहिर हैं और संस्थान उनको क्रिकेट यानी अंग्रेजी की पिच पर घेरकर मारता है। संस्थान की इस तरकीब को भी स्वीकार किया जा सकता है यदि वह इस घटिया तरकीब में भी संस्थान के सभी छात्रों के साथ समान व्यवहार कर रहा होता। संस्थान यदि उन छात्रों की परीक्षा, जो दस जमा दो की अपनी क्लास अंग्रेजी माध्यम से उत्तीर्ण करके आए हैं, हिंदी भाषा के माध्यम से ले लेता और जो दस जमा दो की क्लास हिंदी माध्यम से पास करके आए थे, उनकी परीक्षा अंग्रेजी माध्यम से लेता और फिर परिणाम घोषित करता तब पता चल जाता कि विपरीत भाषा में परीक्षा देने से परिणाम पर क्या असर पड़ता है। तब शायद पहले वर्ग के छात्र भी बार–बार के प्रयास में पास न हो पाते। संस्थान खेल कोई भी खेले, लेकिन कम से कम खेल के नियम तो सभी छात्रों के लिए समान रखे। दुर्भाग्य से संस्थान यही नहीं कर पाया। नियम अंग्रेजी भाषा के पक्ष में है और खेलने के लिए बुलाया जा रहा है भारतीय भाषा के माध्यम से परीक्षा देने वालों को। इस पर भी धूर्तता यह कि उनके हार जाने पर उनकी योग्यता को लेकर ही प्रश्न खड़े किए जा रहे हैं।

ऐसे मौकों पर बुद्धिजीवियों की एक और जमात नमूदार होती है। यह इस पूरी बहस को एक नया ऐंगल देती है। चेहरे पर गंभीरता इतनी है कि इनकी धूर्तता को कोई लाख चाहने पर भी सूंघ नहीं सकता। इनका कहना है कि उच्च शिक्षा भारतीय भाषाओं के माध्यम से दी ही नहीं जानी चाहिए, क्योंकि भारतीय भाषाओं में पढ़ने से छात्रों के भविष्य पर ग्रहण लग जाता है। उनको नौकरी कहां मिलेगी, यह सोच–सोचकर इस जमात का हाजमा खराब होने लगता है। छात्रों के भविष्य को ध्यान में रखते हुए यह जमात, उच्च शिक्षा, खास कर विज्ञान के विषयों की, भारतीय भाषाओं में देने का निषेध करती हैं। आम आदमी इस जमात की मंशा को लेकर धोखा खा जाता है। वह सोचता है, ठीक ही कहते हैं। इस जमात का इसमें अपना स्वार्थ तो है नहीं। बेचारे हमारे भविष्य की खातिर तो कह रहे हैं लेकिन सच्चाई इसके विपरीत है। पहला प्रश्न तो यही है कि इनको, दूसरों के भविष्य को लेकर दूरगामी प्रभाव के निर्णय लेने का अधिकार किसने दिया? कहीं ऐसा तो नहीं कि इनको चिंता अपने भविष्य की है और ये नाटक भारतीय भाषाओं में पढ़ने वाले छात्रों के भविष्य की चिंता का कर रहे हैं? उच्च शिक्षा संस्थानों में पढ़ने के लिए जो भी छात्र आते हैं, वे बालिग या वयस्क ही होते हैं। उनको हमारा संविधान सभी अधिकार देता है। वे संपत्ति खरीद और बेच सकते हैं। वे अपने जीवन का सबसे बड़ा निर्णय यानी अपनी इच्छा से विवाह करने का अधिकार रखते हैं। इतना ही नहीं, उन्हें वोट देने का अधिकार है। संविधान मानता है कि वे इतने मैच्योर हो चुके हैं कि अपनी इच्छा से सरकार बना सकें। परंतु उन्हें यह निर्णय करने का अधिकार नहीं है कि उन्हें किस भाषा में परीक्षा देनी है। किस भाषा में पढ़ना है। यह निर्णय करने का अधिकार उनके पास नहीं है। उनका यह अधिकार, उन्हीं के भविष्य की दुहाई देकर छीना गया है। हमारा तर्क बहुत सीधा है। एक बालिग व्यक्ति को यदि लगता है कि उसका भविष्य अंग्रेजी के माध्यम से पढ़ने लिखने में है तो वह जरुर अंग्रेजी माध्यम से पढ़ेगा और लिखेगा। उसे ऐसा करने का पूरा अधिकार भी है और सरकार उसके इस अधिकार की रक्षा भी करती है। लेकिन दूसरे बालिग व्यक्ति को लगता है कि उसका भविष्य भारतीय भाषा में पढ़ने–लिखने में है। उसे भी इसका अधिकार है लेकिन दुर्भाग्य से सरकार और उसके द्वारा संचालित शिक्षा संस्थान उसे उसका यह अधिकार देने को तैयार नहीं है। जाहिर है कि उच्च शिक्षा संस्थानों में बालिग छात्रों के दो समूह बन गए हैं। पहला समूह अपना भविष्य अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने–लिखने में देखता और दूसरा समूह अपना भविष्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़ने–लिखने में देखता है। बालिग होने के कारण दोनों समूहों के छात्रों को यह निर्णय करने का अधिकार है। लेकिन उच्च शिक्षा संस्थान पहले समूह के इस अधिकार की तो रक्षा करते हैं लेकिन दूसरे

समूह के छात्रों के अधिकार की रक्षा करने की बात तो दूर, वह उसका डंके की चोट पर हनन करते हैं। इसलिए मूल प्रश्न भारतीय भाषाओं के महत्त्व या उनकी उपादेयता का नहीं है, बल्कि यह प्रश्न एक खास वर्ग के मानवीय अधिकारों के हनन का है ।

रुड़की का यह संस्थान अपने छात्रों से पहले तो, उनका यह मानवीय अधिकार या जन्मसिद्ध अधिकार छीनता है और उसके बाद उनको अयोग्य घोषित करता है। वह पहले उनके प्रकृति प्रदत्त कवच और कुंडल छीनता है और उसके बाद उनको निहत्था करके, उन्हें अयोग्य घोषित करता है। लेकिन आश्चर्य है कि इस बात पर तो सभी टीका–टिप्पणी कर रहे हैं कि उन छात्रों को एक और अवसर दिया जाना चाहिए या नहीं, लेकिन मूल प्रश्न की ओर कोई ध्यान देने को तैयार नहीं है। यहां तक भी सिर धुना जा रहा है कि कैसे–कैसे लोग अब आइआइटी तक में आने लगे हैं। भाव कुछ इसी प्रकार का है जैसे किसी अभिजात्य वर्ग के क्लब में कोई धोती पहने नंगे पैरों, देहात का आदमी घुस आया हो।

किसी ने यह प्रश्न नहीं उठाया कि इन छात्रों के अपनी भाषा में पढ़ने के मानवीय अधिकारों की भी रक्षा की जानी चाहिए। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग भी चुप्पी साध कर बैठ गया है। अपने देश में आतंकवादियों के मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिए भी खून पसीना एक कर देने वाले खूंखार बुद्धिजीवियों की भी एक जमात है। याकूब मेनन के मामले में, उसके मानवीय अधिकारों के लिए लड़ने वाले अली बाबा के ऐसे चालीस ने तो अपनी शिनाख्ती परेड भी इस देश के लोगों के सामने कर दी थी। लेकिन इस चुप के मुंह पर, इन प्रतिभाशाली छात्रों के मानवीय अधिकारों का प्रश्न आने पर ताला क्यों लग गया? यहां यह ध्यान रखने की भी जरूरत भी है कि रुड़की के संस्थान का नाम तो इस पूरी बहस में केवल एक प्रतीक के रुप में प्रयोग किया गया है। यह बहस और इसमें उठाए गए मुद्दे भारत के सभी उच्च शिक्षा संस्थानों पर समान रूप से लागू होते हैं।

एक और समूह भी इस पूरी बहस में अपनी हिस्सेदारी संभालकर बैठा है। यह समूह, ऊपर से देखने पर उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश ले लेने के बावजूद वहां के माहौल में स्वयं को मिसफिट पाते हुए, अनुत्तीर्ण हो गए छात्रों का सबसे बड़ा हितचिंतक दिखाई देता है। लेकिन असल में यह समूह इन छात्रों का सबसे बड़ा शत्रु है। यह समूह सबसे पहले तो व्यवस्था और सरकार को लताड़ लगाता है कि वह भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़कर आए छात्रों को आइआइटी और ऐसी ही अन्य संस्थाओं में प्रवेश दे देने के बाद उनको भूल जाता है। अब इन छात्रों की अंग्रेजी कमजोर है, इसीलिए तो यह बाकी छात्रों के साथ चल नहीं पाते और फेल हो जाते हैं। इसलिए शिक्षा संस्थानों को चाहिए कि वे ऐसे छात्रों को अंग्रेजी में अव्वल बनाने के भी प्रयास करें ताकि यह छात्र दूसरे छात्रों का मुकाबला कर सकें। इस समूह के इस दयानुमा सुझावों के पीछे वही धूर्तता छिपी हुई है कि यदि आइआइटी में पढ़ना है तो अंग्रेजी तो सीखनी ही पड़ेगी। हां तुम्हें सिखाने के अतिरिक्त प्रयास किए जा सकते हैं। कोई कम्बख्त यह नहीं कहता कि जो छात्र भारतीय भाषाओं में पढ़ना चाहते हैं, उनके लिए वैसी ही व्यवस्था कर दी जाएगी, ताकि सारी समस्याओं का ही अंत हो जाए।

(लेखक केंद्रीय विश्वविद्यालय, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश के कुलपति हैं)

किसी चीज से डरो मत, तुम अद्भुत काम करोगे। यह निर्भयता ही है जो क्षण भर में परम आनंद लाती है ।

(स्वामी विवेकानंद)

युवा आंदोलन और भारतीय राजनीति

– डॉ. शिवशक्ति बक्शी

विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के साथ–साथ विश्व के सबसे युवा लोकतंत्र का भी दावा भारत कर सकता है। यह दावा न केवल देश में मौजूद विशाल युवा जनसंख्या के आधार पर किया जा सकता है बल्कि चुनावों में युवाओं की भारी भागीदारी भी इस दावे को मजबूत करती है। युवाओं की यह भागीदारी आने वाले दिनो में और भी अधिक बढ़ने वाली है क्योंकि अन्य देश जिनकी जनसंख्या की उम्र निरंतर बढ़ती जा रही है, के मुकाबले भारत दिनोंदिन और अधिक युवा होता हुआ देश है। हाल में हुए चुनावों में युवाओं की भागीदारी बढ़ी है परंतु जहां तक देश को राजनैतिक नेतृत्व देने की बात है तब युवाओं के लिए अभी काफी कुछ करना शेष है। बहुत सारे युवा देश की राजनीति में अपनी जगह बना रहे हैं इसलिए नहीं कि वे युवा हैं बल्कि इसलिए कि वे किसी न किसी बड़े राजनीतिज्ञ या राजनैतिक परिवार से जुड़े हैं। इस तरह का युवा–नेतृत्व मात्र एक छलावा दिखाई पड़ता है और इन परिस्थितियों में हमारे लोकतंत्र के सामने वास्तविक युवा नेतृत्व खड़ा करने की एक बड़ी चुनौती है। भारतीय राजनीति को ऐसे उपादानों की आवश्यकता है जिनके माध्यम से प्रतिभाशाली युवा इसकी ओर आकर्षित हो तथा देश आने वाले दिनों में उत्साह से लबालब सक्षम नेतृत्व पैदा हो सके।

यदि हम देश के विभिन्न क्षेत्रों पर नजर डालते हैं तब पाते हैं कि इन क्षेत्रों में युवा प्रतिभा को आकर्षित करने के लिए कोई न कोई आंतर्निहित व्यवस्था है। भारतीय युवाओं ने विश्व पटल पर विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान बनाई है क्योंकि इन क्षेत्रों में युवा प्रतिभा को पहचान कर उन्हें आकर्षित करने की अंतर्निहित व्यवस्था मौजूद है। कॉर्पोरेट क्षेत्र में हम पाते हैं कि बड़ी कंपनियों के मानव संसाधन विकास विभाग विभिन्न महाविद्यालय परिसरों में जाकर युवाओं को अपनी कंपनियों के लिए चुनते हैं। परिसरों में जाने के स्थान पर यह कंपनियां युवाओं के आवेदन मंगा सकती हैं, हजारों–लाखों की संख्या में वे आवेदन प्राप्त कर लोगों को नौकरी पर रख सकते हैं परंतु वे विभिन्न परिसरों में जाना पसंद करते हैं और यहां तक कि युवा प्रतिभाओं को अपनी कंपनी में रखने के लिए एक–दूसरे से प्रतिस्पर्धा भी करते हैं। भारतीय राजनैतिक व्यवस्था में न तो इस तरह की प्रक्रिया है न ही राजनैतिक इच्छाशक्ति। यदि हम आंकड़ों को देखें तो स्थिति वाकई चिंताजनक है। भारतीय जीवन के दूसरे क्षेत्रों की भांति राजनीति पर भी 'परिवार' का विभिन्न चुनाव क्षेत्रों पर कब्जा है। हालांकि भाजपा एवं वाम पार्टियां अपेक्षाकृत प्रतिभा पर आधारित हैं परंतु कांग्रेस पार्टी के अधिकतर सांसदों ने अपनी सदस्यता पारिवारिक विरासत के रूप में पाई है।

यह संकट तब और भी गहरा हो जाता है जब युवा आंदोलन के प्रति समाज का रवैय्या नकारात्मक दिखता है। देश में युवाओं की भूमिका एवं इनके मुद्दों की चर्चा समाज में शंका और संदेह के वातावरण में होती है। समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं से युवाओं को जोड़कर देखा जाता है। बेरोजगारी, शिक्षा, आतंकवाद, अपराध, ड्रग्स आदि जैसे विषय युवाओं से जोड़े जाते हैं। युवा आंदोलन एवं राजनीति में उनकी भागीदारी को केवल तोड़–फोड़ और नारेबाजी के रूप में देखा जाता है जिसमें अराजकता, तालाबंदी, हड़ताल, कानून–व्यवस्था में खलल आदि शामिल हैं। युवा आंदोलन को समझने एवं इसकी सार्थक भूमिका को तलाशने के प्रयास कम ही देखने को मिलते है। इसके लिए जिम्मेदार वह मानसिकता और सोच है जो युवा को एक 'समस्या' के रूप में देखते हैं और उन्हें समाज की समस्याओं के 'समाधान' के रूप में स्वीकार करने

से परहेज करते है। सामान्यतः पूरा समाज और विशेषकर राजनैतिक दल युवाओं के प्रति 'माई–बाप' का रवैय्या अपनाते हुए उनकी समस्याओं का हल करने का दावा करते हैं जबकि होना यह चाहिए था कि देश की समस्याओं के समाधान के लिए युवाशक्ति का उपयोग, जिसकी समाज को सर्वाधिक आवश्यकता है। इसी कारण से युवा–सक्रियता को समाज में कम ही बढ़ावा दिया जाता है। आज जबकि सत्ता को अपनी उपनिवेशवादी मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है वहीं व्यवस्थाओं का लोकतांत्रीकरण समय की मांग है। समाज को अब स्वीकार कर लेना चाहिए कि युवा आंदोलन लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को न केवल मजबूत करता है बल्कि देश की राजनीति को भी सही रास्ते पर रखता है।

लोकतंत्र और युवा भागीदारी

देश के युवा आंदोलन के मूल में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के मूल्यों और सिद्धांतों की विरासत है। स्वतंत्रता संग्राम के महान् आदर्शों ने देश के युवा नेतृत्व के जड़ों को सींचा है। देशों की युवा पीढ़ी में लोकतांत्रिक मानसिकता के विकास का श्रेय यदि सही मायनों में किसी को जाता है तो वह है 'युवा आंदोलन'। परिवारवाद–वंशवाद के इर्द–गिर्द बुने खोखले 'आभा–मण्डल' अब इन्हें आकर्षित नहीं करते। व्यवस्था परिवर्तन की चाह रखने वाले इस युवा वर्ग की ऊर्जा को रचनात्मक राजनैतिक दिशा में सांगठनिक प्रक्रिया से जोड़कर राष्ट्रहित में उचित वैचारिक प्रबोधन की आवश्यकता है। आपातकाल थोपे जाने से पूर्व पूरा जेपी आंदोलन वास्तव में एक युवा आंदोलन था जो गुजरात के नव–निर्माण आंदोलन से शुरू हुआ और अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् द्वारा पूरे देश में चलाया गया। राम जन्मभूमि आंदोलन में भी युवाओं की बहुत बड़ी भागीदारी थी जिस कारण इस आंदोलन का विरोध करने वालों को मुंह की खानी पड़ी। पूरे विश्व में ज्ञान–संपदा पर भारत के बढ़ते वर्चस्व के पीछे भी भारत की युवाशक्ति का ही योगदान है।

हाल के वर्षों में विभिन्न क्षेत्रों में युवाओं ने अपनी उल्लेखनीय उपलब्धियों से दमदार पहचान बनाई है परंतु राजनैतिक क्षेत्र में जहां तक युवा नेतृत्व का सवाल है हर तरफ शून्य ही नजर आता है। ऐसा लगता है कि देश के युवा आंदोलनों और व्यापक राजनैतिक प्रक्रियाओं के बीच तालमेल की कमी है। लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में युवाओं की उचित भागीदारी का नहीं होना राजनीति से युवाओं के मोहभंग होने का प्रमाण है। जो युवाओं की भागीदारी के नाम पर केवल प्रतीकात्मक कदमों के जरिए युवा प्रतिनिधि का दावा करते हैं वास्तव में समझ नहीं पाते कि कौन सी बातें आज के युवाओं की आकर्षित करती है। राष्ट्रवादी एवं लोकतांत्रिक युवा आंदोलनों ने देश में एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया है जिसमें आज का युवा भारत को एक सुदृढ़, शक्तिशाली, स्वावलंबी एवं समृद्ध राष्ट्र के रूप में देखना चाहते हैं जो विश्व में अपना उचित स्थान प्राप्त करने में सक्षम हो। स्वाभिमान, आत्मविश्वास से भरा तथा लोकतांत्रिक मूल्यों में विश्वास करने वाला युवा आज ऐसे ही भारत निर्माण की अभिलाषा से उत्प्रेरित है। वैसे राजनैतिक दल जिसमें चापलूसी और वंशवाद–परिवारवाद की संस्कृति स्थापित हो चुकी हो ऐसे युवाओं को आकर्षित नहीं कर सकते। वास्तविक युवा आंदोलन एवं देश के राजनैतिक संस्कृति के बीच मुख्य समस्या को 'आदर्श स्थिति' और 'वास्तविकता के बीच के द्वंद के रूप में समझा जा सकता है। जिसमें राजनीति की कठोर मजबूरियों को एक बेहतर समाज और समृद्ध राष्ट्र बनाने के लिए आवश्यक नैतिक मूल्यों से मुंह मोड़ना के पीछे का कारण बताते हैं।

आज की राजनीति का एक विशिष्ट पक्ष यह है कि लगभग सभी राजनैतिक दल युवाओं को रिझाना चाहते हैं। युवाओं के निरंतर बढ़ते वोट ने इन राजनैतिक दलों के समक्ष इस वर्ग को जोड़ने की चुनौती पेश की है। कई राजनैतिक दल वास्तविक युवा नेतृत्व को बढ़ावा देने का दावा कर रहे हैं तथा अपने आप को युवाओं के असली मायनों में हितैषी बता रहे हैं। इस तरह के प्रयासों से युवाओं से उनकी दूरी और भी अधिक बढ़ रही

है। इससे देश के राजनैतिक व्यवस्था में लगते हुए घुन का ही पता चलता है। इससे यह बात स्थापित होती है कि भारत के अधिकतर राजनैतिक दलों में युवाओं को जोड़ने की कोई उचित व्यवस्था नहीं है, न ही योजना, कार्यक्रम, विचारधारा या नेतृत्व है जो युवाओं को आकर्षित कर सके। हाल ही में एक राजनैतिक दल द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से युवाओं को जोड़ने की मुहिम चलाई गई जो इस संदर्भ में राजनीतिक दिवालियापन के सिवा कुछ भी नहीं दिखता।

देश में दमदार नेतृत्व की कमी का मुख्य कारण युवाओं की राजनीति के प्रति बढ़ती उदासीनता ही है। ऐसा भी कहा जाता है कि आज का युवा ज्यादा कैरियर प्रेमी हो गया है तथा राजनीति की कठोर सच्चाइयों से दूर भागना पसंद करता है। परंतु सच्चाई यह है कि देश की राजनैतिक व्यवस्था आज के युवाओं की अपेक्षा एवं आकांक्षाओं के अनुरूप नहीं है। हालांकि अधिकतर राजनैतिक दलों में युवाओं को जोड़ने के लिए अलग से विभाग बनाए गए हैं। परंतु अभी तक ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इन दलों की निर्णय प्रक्रिया में इन युवाओं की सक्रिय भागीदारी है। एक तरफ जबकि युवा प्रतिभा राजनीति की ओर आकर्षित नहीं हो रही, वहीं दूसरी ओर इस जगह पर अवांछित तत्त्व कब्जा जमा रहे हैं। यही कारण है कि जब दूसरे क्षेत्रों में भारत का युवा अपनी उपलब्धियों का झंडा पूरे विश्व में गाड़ रहा है, राजनीति की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है।

युवा भागीदारी : लोकतंत्र का आवश्यक तत्त्व

लोकतंत्र में युवा भागीदारी की आवश्यकता को भारतीय समाज को समझना पड़ेगा। हम कभी–कभी यह भूल जाते हैं कि हमने एक लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाया है, जिसमें नागरिकों की अधिकतम भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। लोकतांत्रीक व्यवस्था केवल चुनावों तक सीमित नहीं होती बल्कि यह ऐसी लोकतांत्रिक संस्कृति है जो समस्त समाज के लोकतंत्रीकरण की अवधारणा पर आधारित होती है, भारत न केवल ऐसा समाज है जो हर दिन और अधिक युवा हो रहा है बल्कि इसमें 18 वर्ष के युवा को मताधिकार का भी अधिकार है। युवा आंदोलन निश्चित रूप से व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में रचनात्मक कदम है। किसी भी लोकतंत्र के लिए एक जागरूक एवं सुदृढ़ युवा आंदोलन आवश्यक तत्त्व है।

आज के संदर्भ में युवा नेतृत्व तैयार करने की प्रणाली विकसित करना अति आवश्यक है। लोकतांत्रिक प्रणाली को सशक्त करने की आवश्यकता है जिससे कर्मठ एवं ईमानदार तथा राष्ट्रवाद से ओत–प्रोत युवा नेतृत्व को विकसित किया जा सके। युवा शक्ति यदि भटक जाती है तो इसका दुरूपयोग 'माओवाद–नक्सलवाद' जैसी विचारधारा के द्वारा किया जाता है जो राष्ट्र के लिए संकट उत्पन्न कर सकते हैं। 'माई–बाप' जैसे रवैय्ये से स्थान पर युवाओं को 'लोकतांत्रिक अवसर' देने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए ताकि देश में सक्षम युवा नेतृत्व खड़ा हो सके। युवा 'समस्या' नहीं बल्कि इस देश की समस्याओं के लिए 'समाधान' है। आज समाज के दृष्टिकोण बदलने की आवश्यकता है, युवाओं को 'लोकतांत्रिक अवसर' देने की आवश्यकता है।

(लेखक भाजपा के मुखपत्र 'कमल संदेश' के कार्यकारी संपादक हैं।)

किसी की निंदा ना करें। अगर आप मदद के लिए हाथ बढ़ा सकते हैं, तो जरूर बढाएं। अगर नहीं बढ़ा सकते, तो अपने हाथ जोड़िए, अपने भाइयों को आशीर्वाद दीजिए, और उन्हें उनके मार्ग पर जाने दीजिए।

(स्वामी विवेकानंद)

हरियाणा सरकार द्वारा निःशक्तजनों के कल्याणार्थ योजनाएं

निःशक्तजन पेंशन

- वर्ष 2015–16 में इस मद में ₹219.35 करोड़ की राशि का प्रावधान है। जनवरी, 2016 से निःशक्तजन की पेंशन ₹1,200 से बढ़ाकर ₹1400 प्रतिमाह।

निःशक्तजन विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति

- 40 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक निःशक्त छात्रों को ₹400 से ₹1,500 प्रतिमाह की दर से छात्रवृत्ति।

शिक्षित निःशक्तजनों को बेरोजगारी भत्ता

- शिक्षित निःशक्तजनों को ₹500 से ₹2,000 तक मासिक बेरोजगारी भत्ता।

स्कूल न जाने वाले निःशक्त बच्चों हेतु वित्तीय सहायता

- 18 वर्ष से कम मंदबुद्धि बच्चों को ₹700 प्रतिमाह वित्तीय सहायता।

राजकीय अन्ध विद्यालय, पानीपत

- 10+2 कक्षा तक एक आवासीय विद्यालय, जिसमें 108 छात्र/ छात्राओं को निःशुल्क सुविधाएं उपलब्ध।

प्रौढ़ नेत्रहीन प्रशिक्षण केन्द्र, पानीपत

- 18 से 45 आयु वर्ग के प्रौढ़ नेत्रहीनों को 3 वर्ष का व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है।

मन्दबुद्धि निःशक्तजनों हेतु राज्य स्तरीय गृह

- सिरतार, रोहतक में 150 मन्दबुद्धि निःशक्त बच्चों के रहने व शिक्षा की सुविधा।

स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान

- निःशक्त कल्याण के क्षेत्र में कार्यरत स्वैच्छिक संस्थाओं को सहायक अनुदान।

कृत्रिम अंग एवं सहायक उपकरण योजना

- जिला रैडक्रॉस समिति तथा जिला पुनर्वास केन्द्र, भिवानी के माध्यम से कृत्रिम अंग एवं सहायक उपकरण दिए जाते हैं।

बहुउद्देशीय शिविरों का आयोजन

- निःशक्त व्यक्तियों को विभिन्न योजनाओं की जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से बहुउद्देशीय शिविरों का आयोजन।
- वर्ष 2015–16 में करनाल, फरीदाबाद व गुड़गांव में 4988 कृत्रिम अंग एवं सहायक उपकरण दिए गए।

निःशक्तजन के लिए बाधामुक्त घर

- हरियाणा सरकार द्वारा निःशक्तजन लाभपात्रों को स्वयं का घर बाधामुक्त बनाने के लिए 6 माह की पेंशन एडवांस।

वर्ष 2015–16 में निःशक्तजनों की योजनाओं के लिए कुल ₹240 करोड़ की राशि का प्रावधान

HARYANA

Global Investors Summit, 07 & 08 March 2016
Pravasi Haryana Divas, 09 March 2016

To register, please visit www.happeningharyana.org or scan QR code

संगठित युवा, समर्थ युवा

— अनिल सौमित्र

वर्षों से सुनते आए हैं–संगठन में शक्ति है। चाहे व्यक्ति हो, समाज हो या राष्ट्र, इसके समग्र और संतुलित विकास के लिए संगठित प्रयास आवश्य है। संगठन, सामर्थ्य का पर्याय है। संगठन, विजय और सफलता का भी पर्याय है। संगठित प्रयास से ही किसी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

आंकड़े बताते हैं कि भारत दुनिया का सर्वाधिक युवा देश है। युवा देश इसलिए कि यहां युवाओं की संख्या सबसे अधिक है। यह स्थिति आगे भी रहने वाली है। लेकिन गुण संपन्न युवा ही समाज और राष्ट्र के लिए हितकारी हो सकता है। युवाओं में देशभक्ति, शिक्षा, संस्कार, संघर्ष, साहस, समर्पण, सेवा, साहचर्य, सद्भावना, सहयोग के साथ विजिगीषु भावना होना आवश्यक है। शक्ति और ऊर्जा संगठित न हो तो उसके फलदायी होने की संभावना कम हो जाती है। इसीलिए किसी भी परिवर्तन, किसी भी निर्माण और विकास के लिए संगठित शक्ति द्वारा प्रयास आवश्यक होगा। भारत को समृद्ध बनाने के लिए नागरिकों को समर्थ होना होगा। चूंकि सर्वाधिक आबादी युवा पीढ़ी की है, इसलिए युवाओं को सामर्थ्यशाली होना होगा। तभी भारत समर्थ होगा।

युवाओं में असीमित ऊर्जा, शक्ति और समय उपलब्ध रहता है। वे जोश और साहस से भरे होते हैं। पहल और प्रयोग के आधार पर नवाचार युवाओं की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। लेकिन इस युवा ऊर्जा, शक्ति, साहस, समय और पहल की प्रवृत्ति को सही दिशा, विवेक और चरित्र देना समाज का दायित्व है। इसके अभाव में भटकाव संभव है। इस भटकाव के कारण लक्ष्य और परिणाम भी प्रभावित होता है। देश–दुनिया और स्थानीय समाज में जो समस्याएं विद्यमान हैं, उसे कमजोर, बेईमान और अक्षम व्यक्ति दूर नहीं कर सकता। लक्ष्य को पूरा करने के लिए क्षमता अनेक उपायों से प्राप्त की जाती है। अगर समाज को श्रेष्ठ और देश को विश्वगुरू बनाना है तो इसके साधन युवा पीढ़ी को समर्थ बनाना होगा।

जब युवाओं के सामर्थ्य की बात होगी तो इसकी पहली सीढ़ी संगठन है। यहां संगठन का तात्पर्य सिर्फ कुछ लोगों का एक उद्देश्य के लिए एकत्रित होना मात्र नहीं है, बल्कि संगठन का व्यापक और गर्हित उद्देश्य है। युवाओं को सबसे पहले अपने व्यक्तित्व और जीवन को सुगठित करने की जरूरत होगी। जीवन का लक्ष्य और उद्देश्य स्पष्ट करना होगा। अपनी दिशा निर्देशित करनी होगी। ज्ञान, शील और चरित्र के आधार पर अपने व्यक्तित्व को आकार देना होगा। व्यक्तिगत रूप से या चारित्रिक रूप से असंगठित युवा किसी काम का नहीं। प्रत्येक युवा को स्वयं के भीतर सद्गुणों का संकलन करना होगा। दुर्गुणों को त्याज्य बनाना होगा। दुर्गुणों से युक्त युवाशक्ति भारत का पुनर्निर्माण नहीं, बल्कि सत्यानाश ही करेगी।

आज भारत अनेक स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक समस्याओं से ग्रस्त है। अगर इन समस्याओं से समाज और राष्ट्र को मुक्त करना है तो हमें गुणात्मक और संख्यात्मक दोनों रूपों में संगठित होना पड़ेगा। आज युवाओं की भीड़ तो दिखाई देती है, लेकिन ज्ञान, शील और चरित्र से युक्त युवा कितने हैं, कहां हैं? क्या यह सच नहीं है कि आज का अधिकांश युवा ध्येय, लक्ष्य और व्यापक उद्देश्यों के प्रति अनभिज्ञ, लापरवाह और निष्क्रिय है। स्वामी वीरेश्वरानंद ने अखिल भारत विवेकानंद युवा महामण्डल द्वारा बेलुड़ में आयोजित चौदहवां वार्षिक युवा प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन करते हुए 23 जनवरी, 1981 को कहा–खुशी की बात है कि महामण्डल चरित्र–गठन पर बल देता है। वही सबसे आवश्यक बात है। वह हमारे देश का आधार है। तुम बालू पर राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते। उसके लिए एक ठोस आधार, एक चट्टानी नींव चाहिए, और यह केवल चरित्र के द्वारा ही हासिल किया जा सकता है। प्राचीन भारत में शिक्षा चरित्र पर बल देती थी और इसके पहले कि विद्यार्थी गुरूकुल या शिक्षा केन्द्र छोड़कर वापस घर लौटे जाए, अपने युवकों को देश की संस्कृति में निष्णात बना देती थी। तैत्तिरीय उपनिषद् में आचार्य विदा ले रहे विद्यार्थियों को उपदेश देते हैं, वह अपूर्व है। उसमें मानवीय, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर बल दिया गया है। आज बहुत कुछ उल्टा है। आज की शिक्षा व्यवस्था में चरित्र पर कोई बल नहीं दिया जा रहा। शिक्षा में मानव मूल्य विलुप्त है। इन स्थितियों में हम बौद्धिक रूप से भले ही ज्ञान अर्जित कर लें, लेकिन इससे देश को महान् बनाने में हमें किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलेगी।

एक और बात महत्त्वपूर्ण है। देश में युवाओं के अनेक संगठन हैं। वे समर्थ भी हैं। लेकिन यह संगठन अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों की दृष्टि से परस्पर विरोधी हैं। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद, भारतीय राष्ट्रीय छात्र संगठन (एनएसयूआई), स्टुडेंट फेडेरेशन आफ इंडिया (एसएफआइ), आइसा जैसे संगठन विद्यार्थियों को संगठित कर रहे हैं। इसी प्रकार गायत्री परिवार, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और रामकृष्ण मिशन जैसे संगठन भी युवाओं को संगठित और नियोजित करने का प्रयास कर रहे हैं, लेकिन दूसरी तरफ विभिन्न वामपंथी संगठन भी युवाओं को संगठित कर रहे हैं। उन्हें शस्त्र और शास्त्र का शिक्षण–प्रशिक्षण दे रहे हैं। माओवादी और नक्सलवादी भी संगठित हैं। अनेक आतंकवादी और आपराधिक संगठनों ने संगठित होकर परिवर्तन का सामर्थ्य विकसित किया है। किंतु उनके परिवर्तन की दिशा विपरीत है। इसलिए विभिन्न संगठनों में लक्ष्य, उद्देश्य और दिशा को लेकर विभेद है। देशभक्त और देशद्रोही दोनों संगठित हो रहे हैं, किंतु परस्पर विरोधी हैं। यह सबसे बडा कारण है जो भारत के विकास को अवरुद्ध कर रहा है। युवाओं की बड़ी ऊर्जा समय और शक्ति देश की नकारात्मक प्रवृत्तियों को रोकने में नष्ट हो रही है। सच्चाई यह भी है कि जिस अनुपात में युवाओं की तादाद बढ़ रही है, उसी अनुपात में संगठनों के प्रयास कम पड़ रहे हैं। क्योंकि आतंकवादी और नक्सली संगठन, दूसरे देशों के दुश्मन संगठन भी प्रतिगामी शक्तियों का विस्तार कर रहे हैं। सूचना और संचार तकनीक ने युवाओं में बड़े पैमाने पर नकारात्मक बदलावों को विकसित किया है। ऐसी स्थिति में चुनौती को अवसर में बदलने वाली युवाशक्ति स्वयं एक चुनौती बनकर देश एवं समाज के सामने खड़ी है। अधिकांश युवा स्वयं के बारे में पहले सोचता है, देश–समाज के बारे में बाद में।

युवाओं के संगठन और सामर्थ्य के संदर्भ में अथर्ववेद की वह ऋचा विलक्षण है जिसमें कहा गया है कि, तुम सब लोग एक मन हो जाओ, सब लोग एक ही विचार बन जाओ, क्योंकि प्राचीनकाल में एक–मन होने के कारण ही देवताओं ने बलि पायी है। यह ऋचा इस प्रकार है–

'संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम्।
देवामागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।।

(अथर्ववेद, 6/64/1)

देवता मनुष्य द्वारा इसलिए पूजे गए कि वे एक चित्त थे, एक–मन हो जाना ही समाज गठन का रहस्य है। स्वामी विवेकानंद ने युवाओं का आह्वान करते हुए कहा है कि यदि तुम 'आर्य' और 'द्रविड़', 'ब्राह्मण' और 'अब्राह्मण' जैसे तुच्छ विषयों को लेकर तू–तू, मैं–मैं, करोगे, झगड़ोगे और पारस्परिक विरोध भाव को बढ़ाओगे तो समझ लो कि तुम उस शक्ति–संग्रह से दूर हटते जाओगे, जिसके द्वारा भारत का भविष्य बनने जा रहा है। विवेकानंद ने युवा संगठन के लिए युवाओं में इच्छाशक्ति का संचय और उनका समन्वय कर उन्हें एक मुखी करने को प्रमुखता दी है। उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा कि प्रत्येक चीनी अपनी शक्तियों को भिन्न–भिन्न मार्गों से परिचालित करता है तथा मुट्ठी भर जापानी अपनी इच्छाशक्ति एक ही मार्ग से परिचालित करते हैं, और उसका फल क्या हुआ है यह दुनिया को पता है। अतः युवा संगठन के लिए करोड़ों युवाओं की भावनाओं को केंद्रीभूत करना जरूरी है।

भारत में अनेक विविधताएं हैं। ये विविधताएं दुधारी हैं। इन विविधताओं के कारण भारत अगर शक्तिशाली हुआ है तो कमजोर भी हुआ है। विविधताएं संगठित करने में अवरोध पैदा करती हैं। विविधताओं में एकता को बचाए और बनाए रखना आसान नहीं है। भारत में जाति, मत–पंथ, भाषा, क्षेत्र, आयु, लिंग, शिक्षा और वेश–भूषा के कारण पहचान स्थापित होती है। इनके कारण वरिष्ठ–कनिष्ठ का भाव, खान–पान और रिश्ते की बात निर्धारित होती है। आर्थिक उदारीकरण के कारण विषमता की अनेक दीवारें टूटती दिखाई देती हैं, लेकिन इसके कारण भारतीय समाज में नई बाधाएं भी पैदा हुई हैं। आधुनिक पश्चिमी परंपरा और संस्कृति भी युवाओं को दिग्भ्रमित करने वाला एक प्रमुख कारक है। इन सभी के बीच युवाओं को संगठित करना, सही दिशा में दर्शन करना कठिन किंतु संभव है।

संगठित युवाशक्ति ही आर्थिक विषमता, बेरोजगारी, सामाजिक–पारिवारिक विघटन, उपभोगवादी संस्कृति, भारतीय मूल्यों के अवमूल्यन को रोक सकता है, आंतरिक और बाह्य समस्याओं से संघर्ष की ऊर्जा दे सकता है। दुनिया में सर्वाधिक युवाओं वाले देश भारत के लिए अवसर है तो चुनौती भी। लेकिन संस्कारयुक्त, शिक्षित, ज्ञानयुक्त, शीलयुक्त, कौशल–संपन्न और प्रशिक्षित युवा सभी समस्याओं का निदान भी हैं। वे सभी परिवर्तनों के वाहक भी हैं और साधक भी। भारत का पुनरोदय इसी संगठित युवाशक्ति के सामर्थ्य पर निर्भर है।

(लेखक भोपाल स्थित अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय से संबद्ध हैं)

युवा शक्ति का देश भारत

— आशीष कुमार 'अंशु'

कवि एवं लेखक राल्फ वाल्डो एमर्सन ने कहा था, "एक महान् व्यक्ति की तलाश एक युवा के सपने में पूरी होती है।"

वास्तव में यह सपना ही है जो हमें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। देश में ऐसे युवाओं की कमी नहीं है, जिनके पंख बड़े नहीं हैं लेकिन उनके हौसलों में उड़ान है। उनके काम करने का क्षेत्र बड़ा नहीं है लेकिन उनके सपने बड़े हैं। वे अपने आस–पास के समाज में अपने छोटे–छोटे प्रयासों से बदलाव ला रहे हैं।

सात साल पहले महाराष्ट्र के पचौड़ा (जलगांव) में बाइस–चौबीस साल के दर्जन भर युवाओं ने जब कस्बे में लगे रक्तदान शिविर में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया तो स्थानीय लोगों ने इसे समूह के चंद युवाओं का अति उत्साह ही समझा। इसलिए उनकी गतिविधियों को समाज में अधिक तवज्जो नहीं मिली। फिर सफाई अभियान, नुक्कड़ नाटकों का सिलसिला शुरू हुआ। इन गतिविधियों से समूह को यह लाभ मिला कि नए युवा साथ में काम करने की इच्छा के साथ सामने आए। इस तरह युवाओं का यह समूह बढ़ने लगा। धीरे धीरे समूह के सदस्यों ने सौ का आंकड़ा पार कर लिया लेकिन इस समय तक इनके समूह का अपना ना कोई नाम था, ना ही काम करने की कोई तय दिशा थी। कोई साइकिल रैली के लिए बुलाता तो हाजिर, कोई मशाल यात्रा के लिए बुलाता तो भी हाजिर।

समय के साथ टीम के सदस्यों ने खुद महसूस किया कि उनकी टीम के पास एक नाम होना चाहिए। लगभग पांच साल पहले इन युवाओं ने मिलकर अपनी टीम को नाम दिया 'लक्ष्य'। इस समय तक टीम में सदस्यों की संख्या लगभग एक सौ पचास हो गई थी और सभी सदस्य युवा थे। इनमें भी सत्तर फीसदी संख्या पच्चीस साल के आस–पास उम्र के युवाओं की थी। उम्र सभी सदस्यों की एक जैसी ही थी, अधिकार भी सबके बराबर क्योंकि लक्ष्य सभी सदस्यों का ही तो था, जो थोड़ा–बहुत भेदभाव था वह लक्ष्य से जुड़े सदस्यों की पारिवारिक पृष्ठभूमि की वजह से ही था। क्योंकि इन सदस्यों में कोई अस्पताल का मालिक था, कोई अखबार की नौकरी वाला था, कोई वेल्डिंग मशीन पर काम करता था, कोई होटल में प्लेट साफ करता था। लक्ष्य में सचिव की भूमिका निभा रहे और जलगांव में कानून की पढ़ाई पढ़ रहे विजय चौधरी के अनुसार, "कहने के लिए हमारे अध्यक्ष डॉ. जयंत राव पाटिल हैं और कार्यकारी अध्यक्ष माधव सिंह परदेसी। लेकिन सच्चाई यह है कि लक्ष्य के मंच पर आकर सभी बराबर हैं।"

बिहार के बिहार ब्रदर्स के नाम से प्रसिद्ध 34 वर्षीय संजीव झा भोपाल में बुन्देचा बंधु से ध्रुपद का ज्ञान हासिल करके शास्त्रीय संगीत के प्रचार–प्रसार के काम में लगे हैं। यह गांवों से उनका लगाव ही है कि वे गांवों के आयोजनों में निःशुल्क प्रस्तुति देने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। संजीव की योजना है, आने वाले समय में बिहार के गांवों की यात्रा करें और ऐसे युवाओं की पहचान करें जिनका रुझान शास्त्रीय संगीत की तरफ हो और उनके लिए निःशुल्क शास्त्रीय संगीत शिक्षण का बंदोबस्त करें।

अचलेश्वर महादेव फाउंडेशन, डाला (सोनभद्र) के चंद्रप्रकाश तिवारी लंबे समय से शास्त्रीय संगीत के प्रचार को मुहिम की तरह चला रहे हैं। पिछले दिनों सिंगरौली (मध्य प्रदेश) और उत्तर प्रदेश की सीमा पर कुरारी गांव में उनके शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रम को सुनने के लिए दस हजार ग्रामीण इकट्ठे हुए।

भ्रष्टाचार के खिलाफ कोई भी लड़ाई कभी आसान नहीं होती। यह बात उत्तर प्रदेश के रिंकू राही से बेहतर कौन समझ सकता है? जनकल्याण अधिकारी रहते हुए उन्हें मुजफ्फरनगर में भ्रष्टाचार के खिलाफ उनकी लड़ाई को खत्म करने के मकसद से उनकी हत्या का प्रयास किया गया। उन्हें छह गोलियां लगीं लेकिन जिस पर ईश्वर की असीम अनुकंपा हो उसे क्या हो सकता है? वह बच गए। पिछले दिनों अलीगढ़ में एक सरकारी छात्रावास में वे दलित बच्चों को आईएएस बनाने की तैयारी में लगे थे। तब अपने अधिकारियों को उन्होंने यह पत्र लिखा कि वे जिस उम्मीद से यहां आए थे, बच्चों का रिजल्ट उस मुकाबले कमतर रहा। रिंकू

राही ने लिखा कि उन्होंने अपनी जिम्मेवारी ठीक तरह से नहीं निभाई है। इसलिए उन्हें छात्रावास में नहीं रहना चाहिए।

किसी भी व्यक्ति में यह बेबाकी ईमानदारी से आती है, यह ईमानदारी दलित अधिकारी रिंकू राही में है। और आज भी उत्तर प्रदेश में भ्रष्टाचार के खिलाफ उनकी लड़ाई जारी है।

उत्तर प्रदेश के बांदा का पच्चीस वर्षीय आशीष सागर अपने राज्य के एक मंत्री के लिए मुसीबत बन गया। आशीष की आरटीआई से मंत्रीजी के भ्रष्टाचार के संबंध में कई महत्त्वपूर्ण सुराग मिले। इस मंत्री की अपनी राजनीतिक पार्टी में हैसियत नंबर दो की रही है।

भोपाल की रंजना, क्षमा कुलश्रेष्ठ और पूजा सुब्रमन्यम शरीर से विकलांग जरूर हैं लेकिन इन तीनों ने अपने लिए विकलांगता को कभी अभिशाप नहीं बनने दिया। अपने जीवन के संघर्ष को आनंद में बदला। रंजना अच्छी कविताएं लिखती हैं। लेकिन उसकी लिखी कविताएं हाथों से लिखी हुई नहीं हैं। रंजना कविता लिखने के लिए पेन हाथ से नहीं दांतों से पकड़ती हैं क्योंकि गले से नीचे के हिस्से में हरकत नहीं है, आप कभी उनसे मिलिए। वह निराश होकर किसी से नहीं मिलती। उनसे मिलकर आपके अंदर जीने की तमन्ना दोगुनी हो जाएगी। क्षमा ने अपने दर्द को मिटाने के लिए आर्ट थेरेपी का सहारा लिया। यह उनकी किताब का नाम भी है। वह अच्छी पेंटिंग बनाती है। बकौल क्षमा, "पेंटिंग ना बनाए तो दर्द के लिए इंजेक्शन लेना पड़ता है, पेंटिंग करने के दौरान दर्द का एहसास ही नहीं होता।" अब क्षमा प्रतिदिन एक गणेश की मूर्ति भी बनाने लगी है। मूर्ति और पेंटिंग का काम साथ–साथ चल रहा है।

पूजा को चर्कोट मेरी टूथ नाम की एक ऐसी बीमारी है जो लाइलाज है। लेकिन पूजा कभी निराश नहीं हुई, वह एक सफल व्यवसायी है। साथ ही साथ अनाथ–विकलांग बच्चों और महिलाओं के लिए एक स्कूल भी चला रही है।

बंगाल के मुर्शीदाबाद में चल रहे आनंद निकेतन नाम के स्कूल के प्रधानाध्यापक से मिलकर आप चौंक सकते हैं क्योंकि उसकी उम्र अठारह साल है, और यह स्कूल नौ सालों से यहां चल रहा है। माने जब यह स्कूल खुला था, उस वक्त इसके प्रधानाध्यापक बाबर अली की उम्र महज नौ साल थी। आठ बच्चों से शुरू हुए इस स्कूल में इस वक्त आठ सौ बच्चे हैं। कायदे से बाबर अली को दुनिया का सबसे कम उम्र का प्रधानाध्यापक होना चाहिए। एक खास बात और, उसके स्कूल में बच्चों को निःशुल्क शिक्षा मिलती है।

पटना के मनीष ने आईआईएम से पढ़ाई की और फिर एक मित्र के साथ खेती कर रहे हैं। मनीष अपने मित्र के साथ मिलकर बिहार को देश की सब्जी बाजार का केंद्र बनाने की दिशा में काम कर रहे हैं। मनीष मानते हैं कि इस दिशा में विकास की बहुत गुंजाइश है।

थिएटर एक्टिविस्ट पबित्र राभा ने एनएसडी से पढाई पूरी करने के बाद असम में अपने गांव चेंगला (उदालगुड़ी) जाने का निर्णय लिया। वे नाटे कद के लोगों के साथ थिएटर का जो नया प्रयोग कर रहे हैं, वैसा दूसरा नहीं दिखता। उन नाटे कद के लोगों के साथ वे थिएटर कर रहे हैं जिन्हें समाज ने हमेशा दुत्कारा और हंसी का पात्र समझा। पबित्र अपने गांव में जो कर रहे हैं, वह एनएसडी का विस्तार ही है। इस आलेख में जिन युवाओं का जिक्र किया गया है, इन सभी की उम्र पच्चीस से पैंतीस साल के बीच में है।

जिस दिन इस देश की एक तिहाई युवा आबादी इस तरह के छोटे–छोटे प्रयासों से खुद को जोड़ने लगेगी और देश में सकारात्मक बदलाव के लिए नए और रचनात्मक सपने देखगी और उसे क्रियान्वित करेगी, यकीन मानिए उस दिन हम श्रेष्ठ नहीं श्रेष्ठतम भारत होंगे।

(लेखक 'इंडिया फाउंडेशन फॉर रूरल डेवलपमेंट स्टडी' से संबद्ध हैं एवं ग्रामीण विषयों पर नियमित लेखन करते हैं)

बदलते सामाजिक परिवेश में युवाओं की भूमिका

— मनोज मिश्र

1974 के बिहार आंदोलन का एक प्रसंग है। आंदोलन के शुरुआती दिन थे। तब तक लोकनायक जयप्रकाश नारायण आंदोलन में शामिल नहीं हुए थे। कुछ लोग आचार्य विनोबा भावे से मिले और आंदोलन में युवाओं के उग्र हाने की शिकायत कर बैठे। आचार्य ने कहा कि जो हालात हैं उसमें युवाओं को इससे ज्यादा उग्र होना चाहिए। समाज में हर तरफ निराशा है। यह अलग है कि बाद में तब की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से मुलाकात के बाद उन्होंने इमरजेंसी की सराहना कर दी। संदर्भ यह है कि जो हालात बनते जा रहे हैं उसमें सबसे कठिन चुनौती युवाओं के सामने है। शिक्षा में बुनियादी बदलाव, रोजगार, समाज पर पूरी तरह से पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव, नई तकनीकी, आबादी, स्वदेशी, स्वावलंबन, धर्म और संस्कृति से लेकर भारतीय मूल्यों को बचाने की चुनौती जैसे तमाम सवाल युवाओं के सामने हैं।

समाज का विभाजन इस तरह से करने की कोशिश हो रही है कि जो इन सवालों पर बोलेगा, इसके लिए काम करना चाहेगा उसे सांप्रदायिक, दकियानूसी, परंपरावादी से लेकर असंवेदनशील आदि कहा जाने लगा है। यह संकट आज का नहीं है। सालों से यही होता आया है। शिक्षा के क्षेत्र में 1949 से काम कर रही अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के साथ भी लगातार यही होता रहा है। जब भी देश में किसी संवेदनशील मुद्दे पर आंदोलन चला, पूरी ही बहस को विद्यार्थी परिषद् बनाम अन्य बनाने की कोशिश की जाती रही है। बावजूद इस पर अडिग रहने वालों ने बार–बार ऐसे लोगों पर सफलता पाई। इसके उदाहरण 1974 का छात्र आंदोलन से लेकर अभी हुए राष्ट्रीय स्तर पर बदलाव में साफ दिखाई दे रहे हैं।

देश में 40 साल के कम उम्र के युवा मतदाताओं की तादाद 50 फीसदी से ज्यादा है। जाहिर है उनके बिना कोई ठोस बदलाव संभव नहीं है। लेकिन वहीं चुनौती युवाओं के सामने यह है कि वे बदलाव कैसा करते हैं। दिल्ली में नारों से मोहित होकर उन्होंने एक अनजान और नौसिखिए अरविंद केजरीवाल को प्रचंड बहुमत दिला दिया। उसका परिणाम सामने आ रहा है कि उन्होंने मान लिया कि उनको हर तरह से लोगों का समर्थन है। परिणाम हुआ कि जिन कामों के नाम पर उन्हें भारी समर्थन मिला उसे वे और उनकी सरकार भूल गए। उन्होंने चुनाव में ऐसे वायदे कर दिए जो उनकी क्षमता में थे ही नहीं।

संयोग से राष्ट्रीय स्तर पर भी सालों बाद एक सकारात्मक बदलाव हुआ। नरेंद्र मोदी ने भी युवाओं को सपने दिखाए और उन्हें चुनाव में भी भारी सफलता मिली। युवाओं ने उनका भरपूर साथ दिया। उन्होंने बड़े पैमाने पर बदलाव में प्रयास शुरू किए जिसका देरी में असर दिखेगा लेकिन विरोधी लोगों को यह प्रयास नागवार गुजर रहे हैं। तरह–तरह के मुद्दों को सामने लाकर सरकार पर हमले शुरू कराए गए। परिणाम यह हुआ कि कई राज्यों में युवाओं को जाति/धर्म जैसे मुद्दों को आगे करके भरमाने की कोशिश की और नरेंद्र मोदी की पार्टी उससे पराजित हुई। लोगों ने देश की सरकार और दिल्ली की छोटी सरकार की तुलना एक ही जैसे करने शुरू कर दी। इससे देश आगे बढ़ने के बजाय पीछे होता जाएगा।

माहौल ऐसे बनने चाहिए कि सवा सौ करोड़ की आबादी देश पर बोझ के बजाए देश की ताकत बने। उसका उपयोग देश के विकास में होना चाहिए। इसके लिए किस स्तर पर तकनीक का उपयोग हो, उसे सरकार और समाज का सकारात्मक साथ हो और देश हर मामले में आत्मनिर्भर कैसे बने इस पर विस्तार से काम होना चाहिए। काफी पहले से यह बहस चल रही है कि विज्ञान समाज के लिए वरदान हो या अभिशाप। अभिशाप मानने वालों को समझाना होगा। यह काम युवा पीढ़ी ही कर सकती हैं। तकनीकी के युग में कंप्यूटर, इंटरनेट, आदि का समाज की बेहतरी के लिए कैसे इस्तेमाल हो यह काम युवा पीढ़ी ही कर सकती है।

युवा सकारात्मक सोच में हो इसके लिए हमें शिक्षा में बुनियादी बदलाव पर बहस शुरू करनी होगी। अंग्रेजों की बनाई शिक्षा प्रणाली से केवल किरानी या कर्मचारी ही पैदा होंगे। बेहतर वैज्ञानिक या मेधावी स्वावलंबी युवा

बनाने के लिए शिक्षा का संबंध रोजगार से अलग करना होगा। ऐसी शिक्षा प्रणाली बने जिसमें युवा खुद रोजगार पैदा करे, समाज को दिशा देने का काम करें। अपने देश में मेधावी विद्यार्थियों की कमी नहीं है। इसी बेजान शिक्षा प्रणाली से शिक्षा प्राप्त करते हुए भी अनेक विद्यार्थी और युवाओं ने ऐसे–ऐसे शोध किए, जिससे समाज का भला हुआ। अनेक आविष्कार हुए। यह आज भी शोध का विषय है कि दुनिया के अमीर और उन्नत देशों में जाकर अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाने वाले युवा अपने देश में इतना कारगर क्यों नही हो पाते ?

आज क्यों सरकारी नौकरी पाने की होड़ कम नहीं हो रही है? उत्तर प्रदेश में सातवीं पास चपरासी की नौकरी के लिए पीएचडी और इंजीनियरिंग डिग्रीधारी लोगों ने आवेदन किया था और आवदेकों की तादात लाखों में होने के चलते भर्ती ही रोकनी पड़ी। विदेशों में तो सरकारी नौकरी का आमंत्रण सालों पहले खत्म हो चुका है। तकनीकी में विस्तार का लाभ अपने देश में भी हुआ और पिछले कुछ सालों से मेधावी विद्यार्थियों में सरकारी नौकरी का आकर्षण कम हुआ है लेकिन यह संख्या काफी कम है। तकनीकी के अच्छे पहलुओं पर कम ध्यान देने और बुरे पर ज्यादा ध्यान देने का मानव स्वभाव रहा है। यह जानकर आश्चर्य होता है कि दिल्ली में आम आदमी पार्टी की सरकार बनने में वही भूमिका "वाई–फाई" फ्री करने की चुनावी घोषणा की थी। यह अलग बात है कि वह आज तक लागू नहीं हो पाई। मोबाइल की इस सुविधा का सकारात्मक चीजों में लाभ उठाने वाले युवाओं की संख्या गिनती की होगी। गाना सुनने, चुटकुले भेजने या मनोरंजन में भद्दे फिल्में देखने वालों की तादात ज्यादा होगी।

यह मानव मन है कि वह सकारात्मक चीजें देरी से समझता है। इंटरनेट में उपयोग से अनेक युवाओं ने बेहतर काम किए हैं लेकिन इसके दुरूपयोग से अपराध में भी बढ़ोत्तरी हुई है, इस तथ्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता है। देश के युवा के सामने सबसे बड़ी चुनौती इंटरनेट के दुरूपयोग को कम करने व सदुपयोग के लिए अपने साथियों को उत्साहित करने की है। एक बड़ी चुनौती युवाओं में नशे की बढ़ती लत को खत्म करने की है। बताते हैं कि पिछले लोकसभा चुनाव में पंजाब में आम आदमी पार्टी (आप) को चार सीटें केवल नशे को मुख्य मुद्दा बनाने के चलते मिलीं। चूंकि नशे के कारोबार में सत्ताधारी दल का एक नेता मुख्य आरोपी साबित हो गया और कांग्रेस भी यह साबित नहीं कर पाई कि वह नशे के कारोबार को पूरी तरह से खत्म करेगी इसलिए 'आप' को पंजाब में जगह मिल गई। अगले विधानसभा चुनाव में यही मुख्य मुद्दा बनने वाला है।

नशे का मुद्दा केवल पंजाब का नहीं है, देश भर में नशे से हर साल सैंकड़ों युवाओं की मौत हो रही है और लाखों नशेड़ी बनते जा रहे हैं। सरकारों की आमदनी का मुख्य स्रोत 'शराब' बन गया है इसलिए सरकारें तो शराब की बिक्री बढ़ाने में ही लगी रहने वाली हैं। जिन राज्यों में शराब पर पाबंदी है वहां भारी मात्रा में शराब की तस्करी हो रही है। नशा और अपराध जैसी बुराइयों के खिलाफ व्यापक स्तर पर काम करने की युवाओं के सामने चुनौती है। अनेक सामाजिक संस्थानों के अध्ययन से पता चलता है कि अगर शुरूआती दौर में युवाओं को सही रास्ते पर लाया जाए, उसके मन के हिसाब से उसे पढ़ने का अवसर मिले, जिससे उसे समय से रोजगार मिल जाए तो वह न केवल गलती करने से बच जाएगा बल्कि अपने साथ–साथ समाज में भले के लिए भी काम करेगा।

तारीख गवाह है कि दुनिया में जब भी कोई महत्त्वपूर्ण बदलाव हुआ है उसकी अगुवाई युवाओं ने की है। युवाओं के बल पर ही भारत को भारत बनाए रखा जा सकता है। अमीर देश भारतीय मूल्यों को अपना रहे हैं और हम उनकी नकल में अपने समाज और परिवार के मूल्यों को छोड़ते जा रहे हैं। संपन्न परिवार की अवधारणा खत्म सी होती जा रही है। व्यक्ति आधारित परिवार कभी आगे नहीं बढ़ पाएगा। अपनी सभ्यता और परंपराओं को समृद्ध बनाने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी भी युवाओं की है और वे इस स्थिति मे रहें, इसके लिए सही दिशा में काम करने की जरूरत है। विविधताओं वाले अपने देश की पहचान को समृद्ध करने की जरूरत है। देश की नई सरकार ने इस दिशा में कई काम शुरू किए हैं लेकिन उसमें सबसे बड़ा काम आदर्श ग्राम योजना है। गांव मजबूत होते ही समाज और देश मजबूत होगा। लेकिन समाज को सही दिशा तभी मिलेगी जब युवाओं की सोच उसी तरह की होगी। युवाओं को इस दिशा में ले जाने का काम सरकार और समाज का तो है ही खुद युवाओं का भी है।

इस लेख का समापन भी 1974 में ही बिहार आंदोलन की एक घटना से है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण जब इस आंदोलन से जुड़े तो उनकी शर्त थी कि वो तभी आंदोलन का नेतृत्व करेंगे जब आंदोलन पूरी तरह से अहिंसक होगा। यह तथ्य है कि जो छात्र–युवा पहले पुलिस को देखते ही पत्थर बरसाने लगते थे, वही जेपी के आने के बाद पुलिस कारवाई पर नारे लगाते थे कि "हमला चाहे जैसा हो, हाथ हमारा नहीं उठेगा।

(लेखक जनसत्ता में मुख्य संवाददाता हैं)

तपः पूत ही हो सकते हैं युवाओं के प्रेरक

— उमेश चतुर्वेदी

संस्कृतियों के विस्तार में क्या सत्ताओं की भी भागीदारी होती है..दुनिया में समाजशास्त्रियों का एक समूह ऐसा है, जो यह मानता है कि संस्कृति का कार्यक्षेत्र स्वायत होता है..इसलिए सत्ताओं को संस्कृति के क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। चूंकि सत्ताओं का एक काम निर्णय लेना और निर्णय के जरिए आर्थिक–सामाजिक और राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करना होता है। इसीलिए मशहूर समाजशास्त्री श्यामाचरण दुबे संस्कृति की स्वायत्तता के विचार का सम्मान करते हुए यह जरूर मानते थे कि सत्ताओं का व्यवहार भी संस्कृति को प्रभावित करता है। सवाल यह है कि सत्ता और संस्कृति के इस रिश्ते को लेकर इस चिंतन की जरूरत क्यों आ पड़ी ? दरअसल सत्ता और संस्कृति के रिश्तों को लेकर मौजूदा सामाजिक और राजनीतिक तंत्र को कुछ ज्यादा ही आलोड़ित कर रहा है। आज के युवाओं को इस वैचारिक आलोड़न से लगातार दो–चार होना पड़ रहा है। खासतौर पर उन युवाओं को, जिन्होंने राजनीति या सामाजिकता का कर्म सामाजिक बदलाव के लिए अख्तियार किया है। राष्ट्रवादी सोच वाले युवाओं की बड़ी संख्या अब भी ऐसी है, जिन्होंने राजनीतिक कर्म में अपनी सक्रियता इसलिए नहीं बढ़ाई है कि उन्हें सिर्फ और सिर्फ राजनीति करनी है और राजनीति के जरिए अपना आर्थिक तंत्र खड़ा करना है और उसके जरिए एक प्रभामंडल रचना है। बल्कि उनकी राष्ट्रवादी आग्रही सोच का व्यापक आधार और लक्ष्य सामाजिक बदलाव लाना तो है ही, भारतीयता की अवधारणा पर लगे आग्रहों के दुराग्रही कपाट को खोलना भी है।

किसी वैचारिक आधार पर समधर्मी सत्ताएं आती हैं तो सांस्कृतिक बदलाव का सपना देखने वाली विचारधाराओं के समक्ष उहापोह की स्थिति अनायास ही आ खड़ी होती है। चूंकि देश और देश के कई राज्यों में राष्ट्रवादी विचारधारा की सत्ता काबिज हो चुकी है और उसके जरिए कुछ लोग सत्ता तंत्र में अपनी हैसियत बना रहे हैं..इसलिए ऐसा उहापोह कम से कम युवाओं में आना असंभव भी नहीं है। उहापोह की वजह यह भी है कि जिस तरह के सामाजिक बदलाव की सोच को लेकर राष्ट्रवादी विचारधारा की अब तक की यात्रा रही है, मौजूदा सत्ता तंत्र उस यात्रा के मुताबिक कम से कम अक्षरशः चलती नजर नहीं आ रही है। निश्चित तौर पर मौजूदा सत्ता के कार्य पूर्ववर्ती सत्ताओं से ज्यादा इतर और भारतीयता की अवधारणा के उतने करीब नहीं हैं..जितनी उम्मीद राष्ट्रवादी सोच ने लगा रखी थी। सत्ता और संस्कृति के रिश्ते इसी वजह से इन दिनों वैचारिक आधार रखने वाले युवाओं को कुछ ज्यादा ही प्रभावित कर रहे हैं।

आखिर ऐसा क्यों नहीं हो रहा है? इस सवाल का जवाब भारतीय आजादी के बाद अपनाई गई व्यवस्था और उसी लीक पर 67 साल से जारी विकास यात्रा में छुपा हुआ है। 2014 के आम चुनावों से पहले जिन्होंने आमूलचूल बदलाव की उम्मीद मौजूदा वैचारिक धारा से लगा रखी थी..उन्हें समझना चाहिए कि सत्ता की एक गति होती है और उसका एक निर्धारित ढांचा भी होता है। चाहे कितनी भी क्रांतिकारी विचारधारा परवर्ती दौर में सत्ता संभाले, सत्ता के सालों से चली आ रही संरचना से अचानक और एकाएक निकल पाना मौजूदा विश्व–व्यवस्था में उसके लिए संभव नहीं है। लेकिन दुर्भाग्यवश इस तथ्य को समझाने वाले तत्व कम हैं। लिहाजा आज का युवा थोड़ा भ्रम में है। हालांकि उसे अब भी उम्मीद है कि जिस वैचारिक धारा में वह डूबते–उतराते अपनी जिंदगी को सौंप चुका है..एक न एक दिन मौजूदा सत्ता भी उसकी अपनी संस्कृति

में जरूर रचेगी, लेकिन इसके लिए इंतजार करना होगा। राजनीतिक और सामाजिक तंत्र के साथ ही सत्ता और आर्थिक तंत्र में बने रहते हुए कच्छप गति से अनुकूल बदलाव लाते रहना होगा। बदलाव एक सतत परंपरा है। परिवर्तन सातत्य के संग आता है तो वह स्थायी होता है, लेकिन सवाल यह है कि युवाओं को यह समझाए कौन?

वैसे आज का युवा भ्रम में भी क्यों ना हो, आज का दौर पूरी तरह भौतिकवादी हो गया है। भौतिकता पर आधारित आर्थिक ताकत ही कामयाबी का नया पैमाना बन चुकी है। फिर आर्थिक तंत्र ने सामाजिक तंत्र को पूरी तरह अपनी चपेट में ले लिया है। आर्थिक ताकत के बिना सामान्य जीवन–यापन भी कठिन हो गया। इसलिए अगर युवा भटक रहा है तो उसमें उसका भी कोई दोष नहीं है। राजनीतिक तंत्र में भी ऐसे लोग काबिज हो गए हैं, जिन्होंने तंत्र का बेजा इस्तेमाल करके अपना आर्थिक साम्राज्य खड़ा कर लिया है। जिनकी अपनी दुनिया चमकीली और तड़क–भड़क वाली है। चमक और तड़क–भड़क युवाओं को कुछ ज्यादा ही लुभाती है। लेकिन ऐसे ही माहौल में वैचारिक अगुआ की जरूरत होती है। गांधी, गोलवलकर, लोहिया, जयप्रकाश जैसी हस्तियां ही युवाओं को नई दिशा और उनकी जिंदगी के मूल लक्ष्य की याद दिला सकती हैं। ऐसा नहीं कि इन दिनों ऐसी हस्तियां नहीं हैं। उन महात्माओं जैसी मानसिक बुनावट वाले लोग नहीं हैं। लेकिन एक तो वह या तो सामने नहीं आ रहे हैं या दैत्याकार रूप से उभरी मीडिया उन्हें सामने लाने में दिलचस्पी नहीं दिखाती। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि यह दौर दैत्याकार मीडिया के प्रभाव वाला दौर भी है। मौजूदा दौर की इस हकीकत को भी समझना होगा। वैसे भी अवधारणा यही है कि अगर किसी व्यवस्था को बदलना है तो पहले उसमें घुसना होता है, लेकिन इस ओर भी दिलचस्पी कम नजर आ रही है। ऐसे में युवा भ्रमित होंगे ही।

कहते हैं कि राह निकलने की गुंजाइश सबसे ज्यादा तब होती है, जब अंधेरा भी सबसे ज्यादा घना होता है। तो क्या यह मान लिया जाए कि हम जिस दौर में हैं, अंधेरा कुछ ज्यादा ही घना है। जिन तथ्यों और तत्वों का उल्लेख इस आलेख में किया गया है, उससे तो ऐसा ही लगता है। तो क्या यह मान लिया जाए कि राह अपने आप निकलेगी। भारतीय परंपरा में सकारात्मक सोच पर जोर देने की बात कही जाती रही है। इस सकारात्मक सोच को बरकरार रखा ही जाना चाहिए। इसके साथ यह भी जरूरी है कि युवाओं को राह दिखाने के लिए समझदार लोग सामने आएं। क्योंकि युवा और छात्र अगर गुमराह हुए तो अतीत के सारे सकारात्मक प्रयत्न व्यर्थ हो जाएंगे। तब बदलाव की उम्मीद भी बेमानी होगी। अगर युवा ताकत को बचाकर रचनात्मक वैचारिक संघर्ष में आगे बढ़ाना है तो सातत्य की अवधारणा पर आधारित बदलाव को उन्हें गहराई से समझाना होगा। इसे समझाने वाले तपः पूत भी चाहिए होंगे।

(लेखक टेलीविजन पत्रकार हैं और लाइव इंडिया टीवी चैनल में वरिष्ठ पद पर कार्यरत हैं।)

भगवान् की एक परम प्रिय के रूप में पूजा की जानी चाहिए, इस या अगले जीवन की सभी चीजों से बढ़कर।

(स्वामी विवेकानंद)

4 दशकों से स्वर्णिम प्रयासों की सुरक्षा

एक निवेश प्यार और भरोसे का!!

क्रिस्टल समूह एक नाम जिसे पिछले चार दशकों से भारतीय किसानों की खुशहाली और फसलों की सुरक्षा के लिए जाना जाता है। भारत वह देश है जहाँ किसानों के खेतों में लहलहाती फसलें उनकी खुशियों को बयान करती है। इसी खुशहाली एवं सम्पन्नता को क्रिस्टल अपने सर्वोत्तम बीज, कृषि रसायन एवं अन्य कृषि यंत्रों के द्वारा सुरक्षित रखती हैं, और इन सब प्रयासों की एक महत्वपूर्ण कसौटी - उन्नत खुशहाल देश में हमारी भागीदारी।

Crystal

Seed to Harvest Solutions

• कृषि रसायन • कृषि यंत्र • बीज

www.crystalcropprotection.com

युवा और बदलाव

— अनिल पांडेय

पिछले दो दशकों में देश और दुनिया में बहुत बदलाव आया है। इस बदलाव में युवाओं की प्रमुख भूमिका रही है। अरब देशों में लोकतंत्र की स्थापना के लिए विद्रोह से लेकर प्रचंड बहुमत से नरेंद्र मोदी को भारत का प्रधानमंत्री बनवाने में युवाओं की ही भूमिका रही है। दुनिया में आई आईटी क्रांति की अलख जगाने वाला युवा ही है। पिछले एक दशक में तो दुनिया में राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक बदलाव में युवाओं की भूमिका तेजी से बढ़ी है। भारत के संदर्भ में तो यह और भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि भारत नौजवानों का देश है। यहां की 65 फीसदी आबादी 35 साल से कम उम्र की है। युवाशक्ति का देश होने के कारण दुनिया की निगाहें भी भारत पर हैं। इसलिए आधुनिक भारत के निर्माण में युवाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण रहने वाली है। हमारे प्रधानमंत्री भारतीय अर्थव्यवस्था को जिस मेक इन इंडिया और डिजिटल इंडिया योजना के तहत सिरमौर बनाना चाहते हैं उसका दारोमदार युवाओं पर ही है। इसलिए भविष्य का भारत कैसा होगा, इसकी दिशा देश के युवा ही तय करेंगे।

मैं युवाओं को लेकर बहुत ही आशान्वित हूं। मैं उन लोगों से कतई सहमत नहीं हूं जो यह रोना रोते हैं कि युवा दिगभ्रमित हो रहे हैं। वे अपना सामाजिक सरोकार नहीं निभाते। वे तो बस मौजमस्ती में तल्लीन रहते हैं। पैसा ही उनके लिए सब कुछ है। अपनी संस्कृति और जड़ों से वे कट चुके हैं। सभी युवा ऐसे नहीं हैं। अच्छे और बुरे लोग हर समाज और हर वर्ग में होते हैं। युवाओं में भी होंगे। लेकिन सभी युवाओं के लिए ऐसा कहना उनके योगदान को पूरी तरह से नकारना है। अगर सभी युवा ऐसे होते तो अन्ना आंदोलन कभी सफल नहीं हो पाता। देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ इतना बड़ा आंदोलन नहीं खड़ा हो पाता और सत्ता में बदलाव भी नहीं हो पाता। अरविंद केजरीवाल जैसा व्यक्ति कभी मुख्यमंत्री नहीं बन पाता। निर्भया बलात्कार का मामला देश में अन्य बलात्कार मामले की तरह थाने के किसी रोजनामचे में दर्ज होकर रह जाता और उसकी गूंज राष्ट्रपति भवन और संसद में सुनाई नहीं देती। और न ही महिलाओं के हक में देश का कानून बदलता। और तो और नरेंद्र मोदी कभी देश के प्रधानमंत्री नहीं बन पाते। अगर युवाओं में सामाजिक बदलाव की चाहत नहीं होती तो अमेरिका की बेहतर नौकरी और अच्छा करियर छोड़कर भक्ति शर्मा पंचायत का चुनाव लड़कर सरपंच नहीं बनती। लंदन के किंग्स कालेज से पढ़ाई करने वाली 25 साल की भक्ति शर्मा मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से सटे बरखेड़ी अब्दुल्ला गांव की सरपंच हैं। राजस्थान की छवि राजावत को कौन नहीं जानता, जो कॉरपोरेट की लाखों का सेलरी पैकेज छोड़कर गांव के लोगों की सेवा कर रही है। दुनिया के सबसे प्रतिष्ठित हार्वर्ड विश्वविद्यालय से इंटरनेशनल डेवलपमेंट में उच्च शिक्षा हासिल करने वाले और अमर्त्य सेन जैसे लोगों के साथ काम कर चुके विनोद यादव अमेरिका को बाय-बाय कर गोरखपुर में दिमागी बुखार के प्रकोप से पीड़ित इलाकों में बदलाव की बयार लाने के लिए धूल नहीं फांक रहे होते। अगर युवा अपनी जड़ों से कटे होते तो विनोद यादव हार्वर्ड में धोती-कुर्ता पहनकर क्लास अटेंड करने नहीं जाते। सुनील जांगलान का यहां जिक्र न करना तो बेमानी होगा। हरियाणा के बीबीपुर गांव के 32 वर्षीय इस सरपंच के कार्यों की चर्चा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सार्वजनिक रूप से चार बार कर चुके हैं। मोदीजी सुनील के कार्यों की चर्चा दो बार रेडियो के "मन की बात" कार्यक्रम में और एक बार यूके और एक बार सिलीकॉन वैली

के अपने सार्वजनिक कार्यक्रम में कर चुके हैं। अपने गांव बीबीपुर को सूचना हाइवे पर सरपट दौड़ाकर विकास की गंगा बहाने वाले सुनील बेटी बचाने के लिए अभियान चला रहे हैं। लिंगानुपात में सबसे पिछड़े राज्यों में शुमार हरियाणा में उनके द्वारा कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ चलाया गया अभियान अब जनांदोलन का रूप ले चुका है। दुनिया में मौन क्रांति बन गया "सेल्फी विथ डॉटर" अभियान उनके द्वारा ही शुरु किया गया है। 32 वर्षीय जांगलान गणित में एमएससी हैं। कॅरियर बनाने की बजाए वे सामाजिक बदलाव में जुटे हुए हैं। उनके कार्यों को देखने दुनिया के कई देशों के लोग आ चुके हैं। 25 विश्वविद्यालय के छात्र उनके काम पर शोध करने के लिए बीबीपुर का भ्रमण कर चुके हैं।

इक्कीसवीं सदी का युवा समझदार और जिम्मेदार हो गया है। नब्बे के दशक में उदारीकरण के झोंके ने उसे जरूर दिगभ्रमित कर दिया था। वह कोक–पेप्सी कल्चर से प्रभावित होकर अपनी जड़ों से कट रहा था। वह पैसे के लालच में अमेरिका और यूरोप जाने लगा था। लेकिन अब उसे अपनी जड़ों से, अपनी संस्कृति से कटने का नुकसान समझ में आने लगा है। अब उसके दिल में अमेरिका नहीं हिंदुस्तान बसने लगा है। नरेंद्र मोदी के विदेशों में सार्वजनिक कार्यक्रमों में उमड़ती युवाओं की भीड़ इसकी बानगी है। पिछले एक दशक में युवाओं और खासकर शहरी युवाओं का रुझान भारतीय संस्कृति की तरफ मुड़ा है। पहले वह पब और डिस्कों में समय गुजारता था, लेकिन अब वह मंदिरों और धार्मिक कार्यों में रुचि लेने लगा है। यकीन न हो तो धर्मगुरुओं और उनके बनाए आश्रमों में जाइए, वहां आप को उच्च शिक्षित युवाओं की एक फौज मिलेगी। आईआईटी और आईआईएम से पढ़े युवा आपको आश्रम के सेवा कार्य में लगे मिलेंगे। देश में आए आपदाओं की तस्वीर तो आपने अखबार और टीवी पर देखी ही होगी। इसमें भी आप को सहायता कार्य में जुटे युवा–नौजवान ही दिखे होंगे।

नरेंद्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद युवाओं में जबरदस्त जोश आया है। मोदीजी ने उनमें देशभक्ति की भावना को और जगा दिया है। मेरे पास आंकड़े तो नहीं हैं लेकिन दर्जन भर से ज्यादा ऐसे युवाओं को जानता हूं जिन्होंने विदेश से पढ़ाई की और वहीं नौकरी कर रहे थे। अब स्वदेश लौटकर कच्ची सड़कों की धूल फांकते हुए देश में अपना व्यवसाय जमा रहे हैं। लोगों को रोजगार दे रहे हैं। यह युवा भारत में उद्यमिता को नई दिशा देना चाहते हैं। मेक इन इंडिया का सपना साकार करना चाहते हैं। दरअसल पिछली सरकारों ने युवाओं को कुछ करने का अवसर और माहौल ही नहीं दिया। ऐसे में युवाओं को दोष देना वाजिब नहीं है। न तो युवाओं को व्यवसाय और उद्यमिता का अवसर मिला और न ही रोजगार का साधन। लेकिन पिछले डेढ़ साल में मोदी ने युवाओं में एक विश्वास जगाया है कि वह जो कुछ करना चाहता है, सरकार उसमें मदद करेगी। अगर आप भारत सरकार की योजनाओं मसलन– मेक इन इंडिया, स्किल इंडिया, डिजिटल इंडिया, स्मार्ट सिटी और ग्रामीण विकास की योजनाओं का अध्ययन करें तो पाएंगे कि इनसे सबसे ज्यादा युवा ही लाभान्वित होने वाले हैं। इसमें उनके लिए रोजगार से लेकर व्यवसाय तक के अवसर हैं।

भारत के पास युवाओं के रूप में अपार बौद्धिक संपदा है। दुनिया में भारतीय युवा मेधा का डंका बज रहा है। गूगल के 43 साल के सीईओ सुंदर पिचाई भारत के ही हैं। आईटी की दुनिया की सबसे बड़ी कंपनियों में से एक माइक्रोसाफ्ट के 48 वर्षीय सीईओ सत्य नडेला भी भारत में ही जनमे हैं। यह तो दो उदाहरण भर हैं। लाखों ऐसे नौजवान दुनिया की बहुराष्ट्रीय कंपनियों में उच्च पदों पर काम कर रहे हैं। उनमें देशप्रेम उफान मार रहा है। प्रधानमंत्री की विदेश में होने वाली भारतीयों की सभाओं में यह उफान दिखता भी है। वे भले विदेश में रहते हों, लेकिन उनके दिल में हिंदुस्तान बसता है। अगर उन्हें देश में रहकर अपने भविष्य को संवारते हुए कुछ करने का अवसर मिलेगा तो वे जरूर दिखाएंगे। इसी तरह से देश में रहने वाले नौजवान

भी देश के लिए कुछ करने का जज्बा रखते हैं। बस उन्हें भी अवसर चाहिए। जब उन्हें अन्ना जैसा नेता मिला तो उन्होंने देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ जन आंदोलन खड़ा कर दिया। जब नरेंद्र मोदी जैसा नेतृत्व मिला तो उन्होंने राजनीति की दिशा मोड़ दी। आज युवा उद्यमियों, लेखकों, फिल्मकारों की एक फौज सी खड़ी हो गई है। गरीबी और अभाव से निकलकर वे अपनी रचनात्मकता को एक नई दिशा दे रहे हैं। पहले आप कल्पना नहीं कर सकते थे कि गरीबी में पला बढ़ा और पेट पालने के लिए दिल्ली में चौकीदारी करने वाला नवाजुद्दीन जैसा एक नौजवान बॉलीवुड में अपना अपना डंका बजा सकता है। चेतन भगत और अमिश त्रिपाठी जैसे युवा लेखक आज पुराने दिग्गज लेखकों को मात देते हुए बेस्टसेलर बन रहे हैं। इसलिए अपनी सोच बदलिए। युवा दिग्भ्रमित नहीं है। उसे अपना लक्ष्य पता है। बस उसका जीने का अंदाज पुरानी पीढ़ी से जुदा है। वह भले ही लेवाइस की जीन्स पहनता है और कोक पीता है, लेकिन उसके दिल में हिंदुस्तान ही हैं। मौका आया तो उसने यह दिखा भी दिया।

इक्कीसवीं सदी सूचना प्रौद्योगिकी की सदी है। पूरी दुनिया डिजिटल हाइवे पर सरपट दौड़ने की कोशिश कर रही है। विकसित देश तो सूचना हाइवे पर लंबी छलांगे लगाकर अपनी अर्थव्यवस्था को और मजबूत बनाने में लगे हुए हैं। भारत भी अब इसमें पीछे नहीं है। वह भी डिजिटल हाइवे पर लंबी उड़ान भरने के लिए तैयार है। दुनिया के जो देश सूचना प्रौद्योगिकी के मामले में गंभीर नहीं हैं, वह विकास की गति में पीछे छूटते जा रहे हैं। हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी वैश्विक जरूरतों को बखूबी समझते हैं। इसीलिए प्रधानमंत्री बनते ही वे अपने डिजिटल इंडिया के नारे को साकार करने में जुट गए। एक जुलाई, 2015 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने डिजिटल इंडिया कार्यक्रम का शुभारंभ किया। सरकार इस योजना पर करीब एक लाख करोड़ रुपए खर्च करेगी। जबकि इसमें करीब साढ़े चार लाख करोड़ रुपए उद्योग जगत द्वारा निवेश किया जाएगा। इससे न केवल बड़े पैमाने पर रोजगार और व्यवसाय का सृजन होगा, बल्कि पूरे भारत की तस्वीर बदल जाएगी। अनुमान है कि डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के लिए करीब 18 लाख प्रशिक्षित युवाओं की जरूरत होगी। डिजिटल इंडिया की पूरी सफलता युवाओं के कंधे पर ही होगी। इसी तरह मेक इन इंडिया के तहत देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने और आत्मनिर्भर बनाने के लिए उद्योगों को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रधानमंत्री की योजना मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टर को पूरी तरह युवाओं के हवाले कर देना है। अभी चीन इसमें आगे है। प्रधानमंत्री की सोच सही है कि युवा ही इसकी प्रोडक्टिविटी बढ़ा सकते हैं। वे उद्योग स्थापित करने के लिए युवाओं को कई तरह की सुविधाएं और सस्ते में कर्ज भी दे रहे हैं। जाहिर है, इससे देश का उत्पादन बढ़ेगा तो जीडीपी भी बढ़ेगी। व्यापार और निर्यात भी बढ़ेगा। इससे देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होगी और भारत एक आत्मनिर्भर और समृद्धशाली राष्ट्र बन पाएगा।

(लेखक कैलाश सत्यार्थी चिल्ड्रेन फाउंडेशन में संपादक (कंटेंट) और दिल्ली पत्रकार संघ के अध्यक्ष हैं)

हमारा कर्तव्य है कि हम हर किसी को उसका उच्चतम आदर्श जीवन जीने के संघर्ष में प्रोत्साहन करें और साथ ही साथ उस आदर्श को सत्य के जितना निकट हो सके लाने का प्रयास करें।

(स्वामी विवेकानंद)

देश और समाज के उत्थान में युवाओं की भूमिका

– डॉ. सौरभ मालवीय

युवाशक्ति देश और समाज की रीढ़ होती है। युवा देश और समाज को नए शिखर पर ले जाते हैं। युवा देश का वर्तमान हैं तो भूतकाल और भविष्य के सेतु भी। युवा देश और समाज के जीवन मूल्यों के प्रतीक हैं। युवा गहन ऊर्जा और उच्च महत्त्वाकांक्षाओं से भरे हुए होते हैं। उनकी आंखों में भविष्य के इंद्रधनुषी स्वप्न होते हैं। समाज को बेहतर बनाने और राष्ट्र के निर्माण में सर्वाधिक योगदान युवाओं का ही होता है। देश के स्वतंत्रता आंदोलन में युवाओं ने अपनी शक्ति का परिचय दिया था।

भारत एक विकासशील और बड़ी जनसंख्या वाला देश है। यहां आधी से अधिक जनसंख्या युवाओं की है। देश की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या की आयु 35 वर्ष से कम है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत सबसे बड़ी युवा आबादी वाला देश है। यहां के लगभग 60 करोड़ लोग 25 से 30 वर्ष के हैं। यह स्थिति वर्ष 2045 तक बनी रहेगी। विश्व की लगभग आधी जनसंख्या 25 वर्ष से कम आयु की है। अपनी बड़ी युवा जनसंख्या के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था नई ऊंचाई पर जा सकती है। परंतु इस ओर भी ध्यान देना होगा कि आज देश की बड़ी जनसंख्या बेरोजगारी से जूझ रही है। भारतीय सांख्यिकी विभाग द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार देश में बेरोजगारों की संख्या लगातार बढ़ रही है। देश में बेरोजगारों की संख्यां 11.3 करोड़ से अधिक है। 15 से 60 वर्ष आयु के 74.8 करोड़ लोग बेरोजगार हैं, जो काम करने वाले लोगों की संख्या का 15 प्रतिशत है। जनगणना में बेरोजगारों को श्रेणीबद्ध करके गृहिणियों, छात्रों और अन्य में शामिल किया गया है। यह अब तक बेरोजगारों की सबसे बड़ी संख्या है। वर्ष 2001 की जनगणना में जहां 23 प्रतिशत लोग बेरोजगार थे, वहीं 2011 की जनगणना में इनकी संख्या बढ़कर 28 प्रतिशत हो गई। बेरोजगार युवा हताश हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में युवाशक्ति का अनुचित उपयोग किया जा सकता है। हताश युवा अपराध के मार्ग पर चल पड़ते हैं। वे नशाखोरी के शिकार हो जाते हैं और फिर अपनी नशे की लत को पूरा करने के लिए अपराध भी कर बैठते हैं। इस तरह वे अपना जीवन नष्ट कर लेते हैं। देश में हो रही 70 प्रतिशत आपराधिक गतिविधियों में युवाओं की संलिप्तता रहती है।

देखने में आ रहा है कि युवाओं में नकारात्मकता जन्म ले रही है। उनमें धैर्य की कमी है। वे हर वस्तु अति शीघ्र प्राप्त कर लेना चाहते हैं। वे आगे बढ़ने के लिए कठिन परिश्रम की बजाय शॉर्टकट्स खोजते हैं। भोग–विलास और आधुनिकता की चकाचौंध उन्हें प्रभावित करती है। उच्च पद, धन–दौलत और ऐश्वर्य का जीवन उनका आदर्श बन गए हैं। अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने में जब वे असफल हो जाते हैं, तो उनमें चिड़चिड़ापन आ जाता है। कई बार वे मानसिक तनाव का भी शिकार हो जाते हैं। युवाओं की इस नकारात्मकता को सकारात्मकता में परिवर्तित करना होगा।

यदि युवाओं को कोई उपयुक्त कार्य नहीं दिया गया, तब मानव संसाधनों का भारी राष्ट्रीय क्षय होगा। उन्हें किसी सकारात्मक कार्य में भागीदार बनाया जाना चाहिए। यदि इस मानव शक्ति की क्रियाशीलता को देश की विकास परियोजनाओं में प्रयुक्त किया जाए, तो यह अद्भुत कार्य कर सकती है। जब भी किसी चुनौती का सामना करने के लिए देश के युवाओं को पुकारा गया, तो वे पीछे नहीं रहे। प्राकृतिक आपदाओं के समय युवा आगे बढ़कर अपना योगदान देते हैं, चाहे भूकंप हो या बाढ़। युवाओं ने सदैव पीड़ितों की सहायता में दिन–रात परिश्रम किया।

युवाओं के उचित मार्गदर्शन के लिए अति आवश्यक है कि उनकी क्षमता का सदुपयोग किया जाए। उनकी सेवाओं को प्रौढ़ शिक्षा तथा अन्य सरकारी योजनाओं के तहत चलाए जा रहे अभियानों में प्रयुक्त किया जा सकता है। वे सरकार द्वारा सुनिश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के दायित्व को वहन कर सकते हैं। तस्करी,

कालाबाजारी, जमाखोरी जैसे अपराधों पर अंकुश लगाने में उनकी सेवाएं ली जा सकती हैं। युवाओं को राष्ट्र निर्माण के कार्य में लगाया जाए। राष्ट्र निर्माण का कार्य सरल नहीं है। यह दुष्कर कार्य है। इसे एक साथ और एक ही समय में पूर्ण नहीं किया जा सकता। यह चरणबद्ध कार्य है। इसे चरणों में विभाजित किया जा सकता है। युवा इस श्रेष्ठ कार्य में अपनी क्षमता और योग्यता के अनुसार भाग ले सकते हैं। ऐसी असंख्य योजनाएं, परियोजनाएं और कार्यक्रम हैं, जिनमें युवाओं की सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। युवा समाज में सामाजिक, आर्थिक और नवनिर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। वे समाज में प्रचलित कुप्रथाओं और अंधविश्वास को समाप्त करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। देश में दहेज प्रथा के कारण न जाने कितनी ही महिलाओं पर अत्याचार किए जाते हैं, यहां तक कि उनकी हत्या तक कर दी जाती है। महिलाओं के प्रति यौन हिंसा से तो देश त्रस्त है। नब्बे साल की वृद्धाओं से लेकर कुछ दिन की मासूम बच्चियों तक से दुष्कर्म कर उनकी हत्या कर दी जाती है। डायन प्रथा के नाम पर महिलाओं की हत्याएं होती रहती हैं। अंधविश्वास में जकड़े लोग नरबलि तक दे डालते हैं। समाज में छुआछूत, ऊंच–नीच और जात–पांत की खाई भी बहुत गहरी है। दलितों विशेषकर महिलाओं के साथ अमानवीय व्यवहार की घटनाएं भी आए दिन देखने और सुनने को मिलती रहती हैं, जो सभ्य समाज के माथे पर कलंक समान हैं। आतंकवाद की समस्या के प्रति भी युवाओं में जागृति पैदा करने की आवश्यकता है। भविष्य में देश की लगातार बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने के लिए अधिक खाद्यान्न की आवश्यकता होगी। कृषि में उत्पादन के स्तर को उन्नत करने से संबंधित योजनाओं में युवाओं को लगाया जा सकता है। इससे जहां युवाओं को रोजगार मिलेगा, वहीं देश और समाज हित में उनका योगदान रहेगा।

केवल राष्ट्रीय युवा दिवस मनाकर स्वामी विवेकानंदजी के स्वप्न को साकार नहीं किया किया जा सकता और न ही युवाओं के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि विश्व के अधिकांश देशों में कोई न कोई दिन युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्णयानुसार वर्ष 1985 को अंतरराष्ट्रीय युवा वर्ष घोषित किया गया। पहली बार वर्ष 2000 में अंतरराष्ट्रीय युवा दिवस का आयोजन आरंभ किया गया था। संयुक्त राष्ट्र ने 17 दिसंबर 1999 को प्रत्येक वर्ष 12 अगस्त को अंतरराष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाने की घोषणा की थी। अंतरराष्ट्रीय युवा दिवस मनाने का अर्थ है कि सरकार युवा के मुद्दों और उनकी बातों पर ध्यान आकर्षित करे। भारत में इसका प्रारंभ वर्ष 1985 से हुआ, जब सरकार ने स्वामी विवेकानंद के जन्म दिवस पर अर्थात् 12 जनवरी को प्रतिवर्ष राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाने की घोषणा की। युवा दिवस के रूप में स्वामी विवेकानंद का जन्मदिवस चुनने के बारे में सरकार का विचार था कि स्वामी विवेकानंद का दर्शन एवं उनका जीवन भारतीय युवकों के लिए प्रेरणा का बहुत बड़ा स्रोत हो सकता है। इस दिन देश भर के विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में कई प्रकार के कार्यक्रम होते हैं, रैलियां निकाली जाती हैं, विभिन्न प्रकार की स्पर्धाएं आयोजित की जाती है, व्याख्यान होते हैं तथा विवेकानंद साहित्य की प्रदर्शनियां लगाई जाती हैं।

स्वामी विवेकानंद ने युवाओं का आह्वान करते हुए कठोपनिषद का एक मंत्र कहा था–

'उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत।'

अर्थात् उठो, जागो और तब तक मत रुको, जब तक कि अपने लक्ष्य तक न पहुंच जाओ।

निःसंदेह, युवा देश के विकास का एक महत्त्वपूर्ण अंग हैं। युवाओं को देश के विकास के लिए अपना सक्रिय योगदान प्रदान करना चाहिए। समाज को बेहतर बनाने और राष्ट्र निर्माण के कार्यों में युवाओं को सम्मिलित करना अति महत्त्वपूर्ण है तथा इसे यथाशीघ्र एवं व्यापक स्तर पर किया जाना चाहिए। इससे एक ओर तो वे अपनी सेवाएं देश को दे पाएंगे, दूसरी ओर इससे उनका अपना भी उत्थान होगा।

(लेखक माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल में सहायक प्राध्यापक हैं।)

उस व्यक्ति ने अमरत्त्व प्राप्त कर लिया है, जो किसी सांसारिक वस्तु से व्याकुल नहीं होता।

(स्वामी विवेकानंद)

बदलते सामाजिक परिवेश में युवाओं की भूमिका

— ऋतेश पाठक

"न हमसफर न हम नशी से निकलेगा,
हमारे पांव का कांटा हमी से निकलेगा"

एक शायर की जुबानी उपरोक्त पंक्तियां खास तौर पर आज के युवा वर्ग को लक्षित है। वास्तव में जब भी एक समाज संक्रमण काल से गुजरता है तो उस संक्रमण के श्वेत–श्याम पक्षों के प्रति सजग, सचेत व रचनाशील दृष्टि बनाए रखने की आवश्यकता होती है और ऐसा करने में सर्वाधिक सक्षम वर्ग उस समाज का युवा वर्ग ही होता है। इसके कई कारण हैं। प्रथमतया युवावर्ग सर्वाधिक क्षमतावान होता है। दूसरे, किसी भी परिवर्तन का प्रत्यक्ष–परोक्ष प्रभाव उसे लंबे समय तक महसूस करना होता है। तीसरा, परिवार से लेकर समाज तक वास्तविक निर्णायक की भूमिका प्रायः युवाओं की ही होती है।

तो, बदलते परिवेश में युवाओं की भूमिका क्या हो सकती है अथवा क्या होनी चाहिए, इस प्रश्न पर विचार करने से पहले हमें यह देखना समीचीन होगा कि आखिर सामाजिक परिवेश बदल क्यों रहा है अथवा किन स्तरों पर परिवर्तन अधिक तथा दीर्घजीवी है। हम अगर आस–पास के परिवेश को देखें तो यह चित्र और भी स्पष्ट हो जाता है। आज युवाओं की प्राथमिकता क्या है? खास यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण इसलिए है कि इस समय देश की आधी से अधिक जनसंख्या कार्यशील वय वर्ग में है और इसमें भी सर्वाधिक संख्या युवाओं की है। परिवर्तन के अनुसार संधान भी भिन्न होगा तथा परिणाम भी भिन्न होगा। वर्तमान प्रसंग में हम युवा मानस को मानक बनाकर संधान का प्रयास कर रहे हैं। बेशक तकनीकी रूप से बेरोजगारी की समस्या ज्वलंततम समस्याओं के रूप में मौजूद है। और इसकी वजह से हुई युवाओं की हालात को यूं बयां किया जाता है:–
"ओ मेरे अहबाब क्या नुमायां कर गए!

पढ़े–लिखे, बी.ए. हुए, चाकरी की, पेंशन मिली और मर गए!!"

वास्तव में आज का अधिकांश युवा जीविका की इस आपाधापी से बाहर आ नहीं पा रहा है और इस कारण जीवकोपार्जन या धनोपार्जन के अलावा समाज, संस्कृति व राष्ट्र के विषय में चिंतन से खुद को उतना जोड़ नहीं पाता है जितनी की आवश्यकता होती है। यही वह बिंदु है जहां युवा वर्ग को अपनी प्राथमिकता और राष्ट्रनिर्माण में अपनी भूमिका तय करने की जरूरत होती है।

संक्रमण काल में किसी स्थायी समाज के समक्ष सबसे बड़ा खतरा नई शक्तिशाली संस्कृति समाज के द्वारा उनके मौलिक मूल्यों को स्थानापन्न करने का रहता है। इस समस्या से तभी निपटा जा सकेगा जब युवा अपनी रूचि इस विषय में लेगा। पिछली कुछ सदियों का रूझान यह बताता है कि लगभग हरेक संक्रमण काल में परिवर्तन का केंद्र–बिंदु या तो राजसत्ता या अर्थसत्ता पर नियंत्रण को रखा गया है और कभी भी ये दोनों साथ लेकर नहीं चले गए। वहीं परिवर्तन में निर्णायक भूमिका निभाने वाले बहुसंख्यक वर्ग को इस नियंत्रण में कोई भूमिका भी नहीं मिल सकी बल्कि हर नए नियंत्रक ने अपने सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्य उस पर आरोपित कर दिए।

ऐसी किसी भी स्थिति से निपटने के लिए स्थायी समाज को चतुर्दिक स्वावलंबन की आवश्यकता होगी और ऐसे स्वावलंबन के अगुआ युवा ही हो सकते हैं। अतीत में भी हुए बदलावों में युवाओं की भूमिका (सकारात्मक व नकारात्मक दोनों रूपों में) इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण रही है या फिर आज की तरह की निष्क्रियता का खामियाजा समाज को नकारात्मक रूप में झेलना पड़ा है। इतिहास साक्षी है कि अराजक होते समाज को पुनर्व्यवस्थित करने के लिए चाणक्य जैसे महामनीषी ने तरुणाई की अंगड़ाई लेते चंद्रगुप्त (20 से भी कम उम्र) को ही मैदान में खड़ा किया और राष्ट्र को एक अद्वितीय सशक्तता की स्थिति में ले गए। यहां चंद्रगुप्त का उल्लेख इसलिए भी आवश्यक है कि उनका आरोहण केवल राजसत्ता पर नियंत्रण भर नहीं था। बल्कि राजसत्ता में बदलाव के साथ ही उस समाज ने अपने धरोहर मूल्यों की पुनर्स्थापना का एक नया अध्याय भी शुरू किया था। इस संदर्भ में यह अन्य युवा शासकों के सत्तारोहण से भिन्न कहा जा सकता है।

भारतीय संदर्भ में सामाजिक परिवेश में बदलावों के 3 महत्त्वपूर्ण कालखंड मुगल शासनकाल, ब्रिटिश शासनकाल और ब्रिटिशोपरांत शासनकाल (वर्तमान) के रूप में देखे जा सकते हैं। इनमें से पहले दोनों कालखंडों में राजसत्ता में परिवर्तन के बाद धर्म, शिक्षा, भाषा विधि, पारिवारिक–सामाजिक मूल्य आदि में सायास परिवर्तन किए गए और बहुसंख्यक व सशक्त युवा या तो मौन रूप से इन परिवर्तनों को स्वीकार करते रहे या फिर मुखर रूप से इनके समर्थक बनकर सामने आए। इन दोनों कालखंडों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अभाव या इस कारण जीवन पर संकट जैसी स्थितियां सचेत नेताओं के लिए समस्या जरूर बनती थी। तथापि ऐसा नहीं है कि यह कालखंड संघर्षविहीन रहे हों। बल्कि उन कालखंडों में अपना सर्वस्व दांव पर लगाकर संघर्ष की भेरी बजाने वाले हुतात्माओं की कृपा से ही अपने मौलिक सांस्कृतिक–सामाजिक मूल्यों को एक हद तक सुरक्षित रख पाने में सफल हुए हैं।

उपरोक्त अंतिम कालखंड अर्थात् वर्तमान काल में स्थितियां भिन्न है और संक्रमण का उपकरण राजसत्ता न होकर अर्थसत्ता को बनाया गया है। ऐसे में युवाओं के समक्ष ज्यादा गंभीर चुनौती उपस्थित हो चुकी है। साथ ही वैश्वीकरण और बौद्धिक आतंकवाद इस अर्थसत्ता के सहयोगी उपकरण बनकर उभरे हैं कि आज के युवाओं के लिए इनके बीच रहकर इनसे जूझने के अलावा कोई रास्ता बचता नहीं है। इस स्थिति में युवाओं की भूमिका अपने दैनंदिन गतिविधियों में हरेक छोटी–छोटी कालावधियों और अल्पायु गतिविधियों के बीच भी न केवल अपने मौलिक मूल्यों को बचाए रखने की बल्कि उसे औरों के लिए भी अनुकरणीय बनाने की है।

इससे इतर एक बड़ी भूमिका जो युवाओं का इंतजार कर रही है, वह है आधुनिक व्यवस्थाओं को ठोकर मारकर केवल मौलिक सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित ढांचा फिर से खड़ा करने की शक्ति। क्या जीविका व जीवन के मानक इतने संकीर्ण हो चले हैं कि हम इनकी सुपुष्टि के क्रम में अपनी मौलिकता को अक्षुण्ण न रख सकें। वास्तव में यही वह बिंदु है जहां युवा पीढ़ी को सर्वाधिक चिंतन की आवश्यकता है। हमें स्वामी विवेकानंद जैसे युवा संन्यासियों के साथ ही स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे संगठनशील संन्यासियों की जरूरत बड़ी संख्या में है जो अपने जीवन के सीमित दायरे से बाहर निकलकर ज्ञान–विज्ञान, अध्यात्म, शिक्षा व्यापार आदि क्षेत्रों में ऐसी वैकल्पिक संस्थाओं की रचना का ठोस आधार तैयार करें जो संक्रमणकाल के अवांछित सह–उत्पादों का निर्मूलन करने की क्षमता रखते हों और आत्मगौरव भरे कदमों के साथ विश्वग्राम से कदमताल करने को तैयार हों।

(लेखक भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से जुड़े हैं)

सबसे बड़ा धर्म है अपने स्वभाव के प्रति सच्चे होना। स्वयं पर विश्वास करो।

(स्वामी विवेकानंद)

Democracy Empowered...

...by Our Electronic Voting Machines

Vote With Confidence

Bharat Electronics Limited (BEL), the country's foremost defence electronics company, redefined voting in India with its Electronic Voting Machines (EVMs). Reliable and tamper-proof, the EVMs facilitate free and fair elections in the country.

भारत इलेक्ट्रॉनिक्स
BHARAT ELECTRONICS

QUALITY. TECHNOLOGY. INNOVATION.

e-mail: corpcomn@bel.co.in
www.bel-india.com

A Navratna Company

चाहिए सृजनशील युवा...

– संजीव कुमार सिन्हा

यौवन वसंत की तरह है। मनुष्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ समय। मानो शरीर में सारी शक्तियां प्रस्फुटित हो रही हों। उत्साह और उमंग का संगम। सौंदर्य देखते बनता है। इसी समय व्यक्तित्व उभरता है।

युवा कौन है? कैसा हो

इसका सटीक उत्तर तैत्तिरीय उपनिषद् के एक सूत्र में मिलता है –

"युवा स्यात्। साधु युवा, अध्यायिकः। आशिष्ठो, द्रढिष्ठो, बलिष्ठः।"

अर्थ है– युवा बनो। साधु (शालीन) स्वभाव वाले। अध्ययनशील। आशावादी। दृढ़निश्चय वाले। बलिष्ठ।

युवा वह है जो वर्तमान में जीता है। जो कुछ ठान लें तो उसे पूरा करके ही दम लें। जिसमें अदम्य साहस, शौर्य और पराक्रम कूट–कूट कर भरा हो। जिसकी हुंकार से सिंहासन डोल उठता हो। अन्याय देखते जिसका खून खौल उठता हो। यानी राष्ट्र की उज्ज्वल आशा का प्रतीक।

युवा ऊर्जा का भंडार है। यदि इसे ठीक मार्गदर्शन मिले, तो समाज और राष्ट्र तरक्की करता है लेकिन यदि इसका सुनियोजन न हो, तो फिर यह चुनौती भी बन जाता है। इसलिए सावधानी बरतनी होगी कि जो युवा सृजन का पर्याय है वह विध्वंसकारी न बने।

युवाओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है –

बेरोजगारी

युवाओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती है बेरोजगारी की। गलत आर्थिक नीतियों के चलते बेरोजगारी की दर तेजी से बढ़ रही है। काफी पैसे खर्च करने के बाद शैक्षिक संस्थानों से उच्च शिक्षा प्राप्त कर युवा नौकरी की तलाश में निकलते हैं तो हालात देखकर उन्हें बहुत निराशा होती है। उन्हें दर–दर भटकना पड़ता है। इससे उनमें हीन भावना पनपती है।

हिंसा

चरित्र निर्माण का अभाव, बेरोजगारी और राजनीतिक मतवाद....इन्हीं सब के चलते युवा हिंसा की ओर अग्रसर होते हैं। मारपीट, तोड़फोड़, बस जलाना....यह सब युवा–आंदोलनों में देखने में आता है। वहीं, नौकरी न मिलने से हताश बेरोजगार युवाओं को बरगलाना आसान होता है। स्वार्थी तत्व उन्हें आतंकवाद और नक्सलवाद से जोड़ लेते हैं। युवाओं को समझना होगा कि हिंसा से कोई समाधान नहीं निकलता। इससे भय और दहशत व्याप्त होती।

नशा

युवाओं में नशे की प्रवृति तेजी से बढ़ रही है। इससे उनका शरीर कमजोर होता है और भविष्य चौपट। सिगरेट, शराब पीना तो अब सामान्य बात है, अब तो कैम्पसों में गांजा, चरस और ड्रग्स बिकने लगे हैं और युवा इनका धड़ल्ले से सेवन कर रहे हैं। युवा संगठनों को नशामुक्ति के लिए अभियान चलाना चाहिए।

दहेज का दानव

दहेज की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। अनगिन परिवारों को इसने तहस–नहस कर डाला है। कितनी ही वधुएं दहेज की बलि चढ़ गईं और आज भी चढ़ाई जा रही हैं। गरीब घरों की पढ़ी–लिखी लड़कियों को इस समस्या का और खामियाजा भुगतना पड़ता है। यदि कन्या ने उच्च शिक्षा प्राप्त कर लिया तो उसके माता–पिता को और अधिक दहेज की व्यवस्था करनी पड़ती है। कन्या भ्रूण हत्या के पीछे भी दहेज एक प्रमुख कारण है। युवाओं को दहेज प्रथा को एक चुनौती की तरह लेना चाहिए और इसे मिटाने के लिए आगे आना चाहिए।

प्रतिभा पलायन

कोई राष्ट्र महान् कैसे बनता है? जब वहां के श्रेष्ठ दिमाग स्वदेश में सक्रिय रहते हैं। लेकिन जब वह विदेश– अमेरिका, जर्मनी, ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया.....की ओर रुख कर लेता है तो देश को भयंकर नुकसान होता है। लाखों रुपए खर्च होते है तो कोई डॉक्टर, इंजीनियर बनता है, यह राष्ट्र के काम में आना चाहिए। देश में ऐसा माहौल बन गया है कि देश की प्रतिभा देश में नहीं, विदेश में अपना भविष्य देखती है। लगभग ढाई करोड़ भारतीय विदेशों में काम कर रहे हैं। प्रतिभा पलायन के पक्ष में लोग दलील देते हैं कि भारत में उच्चस्तर की प्रयोगशालाएं नहीं हैं। शिक्षा की गुणवत्ता और इसका स्तर ऊंचा नहीं है। शिक्षण संस्थानों में भ्रष्टाचार चरम पर है, नौकरी के लिए सिफारिश चाहिए....यह सब कुछ कारण हैं, जिसके चलते छात्र विदेश की ओर रुख करते हैं। वास्तव में, कुछ कुशाग्र बुद्धि के छात्रों का उच्चतम शिक्षा और शोध के लिए विदेश जाना बुरी बात नहीं है लेकिन स्थिति भयावह तब हो जाती है जब आईआईटी, आईआईएम, एम्स....जैसे संस्थानों से अध्ययन करने के उपरांत छात्रों में विदेशों में नौकरी प्राप्त करने की होड़ लग जाती है। हमें युवकों को ऐसी राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत करना होगा कि वे उच्च शिक्षा प्राप्त कर अपनी कर्मठता और बुद्धिमत्ता से स्वदेश को तरक्की के रास्ते पर ले जाएं।

अपसंस्कृति

प्रगतिशीलता के नाम पर नैतिकता को तिलांजलि दी जा रही है और भारतीयता का उपहास उड़ाया जाता है। युवाओं पर पाश्चात्य अपसंस्कृति का प्रभाव बढ़ रहा है। बसों में, मेट्रो में और पार्कों में यौन उच्छृंखलता सरेआम हो गई है। इसे दुर्भाग्य ही कहेंगे कि पूरी दुनिया में संस्कार और आदर्श के लिए भारत की विशिष्ट पहचान रही है लेकिन स्वदेश में अब यह उपेक्षित हो रहा है।

नई आर्थिक नीति और उपभोक्तावादी संस्कृति ने व्यक्तिवादी चिंतन को बढ़ाया है। युवा इसके शिकार हो रहे हैं और परिवार संस्था इससे प्रभावित हो रहा है। इसका प्रभाव सामाजिक सरोकारों पर भी पड़ रहा है। सिनेमा, टीवी और विज्ञापनों में प्रस्तुत फैशन को अपनाकर युवा अनावश्यक रूप से अपनी जरूरतों को बढ़ा रहे हैं।

वंशवाद

युवाओं की प्रभावी संख्या को देखते हुए राजनीतिक दल उनको अपने संगठन से जोड़ने के लिए अभियान चलाते हैं। युवाओं से खूब काम लिए जाते हैं, लेकिन जब चुनाव में प्रत्याशी खड़े करने की बात होती है तो उनकी उपेक्षा होती है। कुछ युवाओं को जगह मिलती भी है तो उनमें पार्टीनेता अपने परिवार के लिए जगह सुनिश्चित कर लेते हैं। इससे लोकतंत्र का विकास बाधित होता है। वंशवाद की धारणा वास्तविक नेतृत्व को उभरने नहीं देता। लोकतंत्र राजतंत्र में न बदले, युवाओं को इसके विरोध में पार्टी मंच पर अपनी बात पुरजोर ढंग से उठाना चाहिए।

आदर्श का अभाव

इस पर चर्चा होती है कि देश में राष्ट्रीय चारित्र्य का अभाव हो गया है, आदर्श व्यक्तित्वों की कमी हो गई है। युवा को उपयुक्त मार्गदर्शन नहीं मिलता। वहीं दूसरी ओर, युवा किकेट खिलाड़ी और अभिनेताओं को ही आदर्श मान रहे हैं। उनके चित्र अपने कमरों में लगाते हैं। यह ठीक है कि खिलाड़ी और अभिनेता हमारा मनोरंजन करते हैं। लेकिन बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और राजनेताओं का देश के भविष्य को संवारने में सशक्त योगदान होता है। अतीत में हमारे देश में भगत सिंह, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, डॉ. राममनोहर लोहिया, पं. दीनदयाल उपाध्याय, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, अज्ञेय प्रभृति अनेक प्रेरक पुरुष हुए हैं, इनसे प्रेरणा ली जानी चाहिए।

युवाओं के सर्वांगीण विकास के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं–

चरित्र निर्माण

जीवन का उद्देश्य क्या है? येन–केन–प्रकारेण अर्थोपार्जन? हमारे देश में चरित्र–निर्माण को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, नेता, अभिनेता, उद्योगपति... कुछ भी बनने से पहले पहली आवश्यकता है चरित्रवान नागरिक बनना। चरित्रवान नहीं होने पर बड़े से बड़े पद पर बैठा व्यक्ति देश का अहित करेगा और यदि साधारण नागरिक भी चरित्रवान है तो वह देश का भला करेगा। चरित्र निर्माण परिवार से प्रारंभ होता है इसलिए परिवार का प्रथम दायित्व बनता है। इसके बाद हमारे शिक्षण संस्थान का दायित्व बनता है लेकिन यहां केवल डिग्रियां बांटी जा रही हैं, चरित्र निर्माण की सीख नहीं दी जाती। परिवार, शिक्षण संस्थान और सामाजिक संगठनों को चाहिए कि युवाओं में चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान दें।

स्वाध्याय

देश को प्रज्ञावान युवा चाहिए इसलिए उन्हें स्वाध्यायशील होना चाहिए। लेकिन जो परिदृश्य देखने में आ रहा है वह निराशाजनक है। युवाओं की पुस्तकों में दिलचस्पी कम हो रही है। पुस्तकालयों में उनका जाना कम हो रहा है। ध्यान रखना होगा कि स्वाध्याय से बुद्धि और संस्कार बढ़ता है।

स्वावलम्बन

बेरोजगारी से नौजवान हताश और परेशान है। इससे कैसे मुक्ति पाई जाए? सरकारी नौकरी की अपनी सीमाएं हैं इसलिए केवल इसी भरोसे रहना ठीक नहीं है। युवा स्वरोजगार के माध्यम से स्वावलंबी बने और स्वयं का रोजगार स्थापित करने के साथ ही अन्य लोगों को भी रोजगार दें। सरकार को चाहिए वह बेरोजगार युवाओं को स्वयं का उद्यम स्थापित करने के लिए बैंकों से अनुदान युक्त ऋण उपलब्ध कराए।

स्वस्थ युवा

नशा, आलस्य, लापरवाही....के चलते युवाओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। युवाओं का स्वस्थ होना जरूरी है। स्वस्थ शरीर होगा तो स्वस्थ मस्तिष्क होगा। स्वामी विवेकानंद कहते थे, "व्यक्तित्व के विकास के लिए शारीरिक शक्ति और बुद्धिमत्ता दोनों की आवश्यकता है।" युवा स्वस्थ होंगे तो राष्ट्र भी सबल होगा। इसलिए समुचित आहार के साथ–साथ योग का भी अभ्यास आवश्यक है।

गौरव का भाव

आज के युवा में आत्म–गौरव के बोध का अभाव है। इसमें युवाओं का दोष कम है, इसके लिए जिम्मेदार है हमारी शिक्षा–व्यवस्था। हमारे महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में छात्रों को भारतीय मनीषियों के ज्ञान से

परिचित नहीं कराया जाता है। इसलिए वे विश्व की सबसे श्रेष्ठ और पुरातन संस्कृति के वारिस होने का अनुभव नहीं कर पाते हैं।

एक बार कैलिफोर्निया के छात्र ने भारतीय छात्र से कहा, अगली छात्र–सभा में आप किसी अच्छे कवि पर अपने विचार हमें सुनाइए। भारतीय छात्र ने गर्व से कहा– मैं मिल्टन पर कुछ कहूंगा। जब उन्होंने पूछा क्या कुछ भवभूति, कालिदास, दण्डी पर भी कह सकेंगे तो वह बोला उसके लिए तो मुझे कुछ समय चाहिए। इस तरह की है हमारी हास्यास्पद स्थिति। यानी हम अपनी ही महान् विरासत से अनभिज्ञ हैं।

भारत दुनिया का सबसे युवा देश है। इस समय लगभग 65 प्रतिशत आबादी युवा है। यह अपने देश के लिए स्वर्णिम युग हो सकता है। सारी देश की निगाहें युवा पर है। युवा चाहे तो भारत परमवैभव पर पहुंच सकता है।

इतिहास साक्षी है कि देश में जितनी भी कांतियां हुई हैं उसमें युवाओं की भूमिका उल्लेखनीय रही है। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, तांत्या टोपे और मंगल पांडे युवा ही थे। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान शहीद भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, खुदीराम बोस जैसे असंख्य युवा कांतिकारियों ने देश को आजाद कराने के लिए अपने जान की बाजी लगा दी। सत्तर के दशक में जब देश पर आपातकाल थोपा गया तो जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में युवाओं ने अदम्य साहस का परिचय देते हुए लोकतंत्र की रक्षा की। विदेशी घुसपैठियों को खदेड़ने को लेकर युवाओं ने असम आंदोलन का सूत्रपात किया। वर्तमान समय में भी तमाम चुनौतियों के बाद युवाशक्ति इतिहास रच रही है।

हाल ही में अन्ना हजारे के नेतृत्व में भ्रष्टाचार के खिलाफ लाखों युवा सड़कों पर उतरे। निर्भया कांड में युवाओं ने सरकार को हिलाकर रख दिया।

स्वामी विवेकानंद ने युवाओं का जो आह्वान किया था, वह हमारा पाथेय बन सकता है, "ऐ युवकों! जाओ–जाओ! तुम लोग वहां जाओ! जहां तुम्हारे बंधु पीड़ा और पतन के नर्क में पड़े हुए हैं। जहां वे दुःख–कष्ट की मार से पीड़ित हैं, वहीं जाकर उनका दुःख हल्का करो। अधिक से अधिक क्या होगा? यही न कि इस प्रयास में तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी, पर उससे क्या? मरना तो सभी को है, तो फिर एक महान् आदर्श को लेकर क्यों न मरा जाए?

जीवन में एक महान् आदर्श को लेकर मरना ज्यादा बेहतर है। द्वार–द्वार जाकर अपने आदर्श का प्रचार करो। इससे तुम्हारी अपनी उन्नति तो होगी ही, साथ ही तुम अपने देश का कल्याण भी करोगे। तुम्हीं पर देश का भविष्य निर्भर है, उसकी भावी आशाएं केंद्रित हैं। तुम्हें अकर्मण्य जीवन बिताते देख, मुझे मार्मिक पीड़ा होती है। उठो! उठो! काम में लग जाओ–हां काम में लग जाओ! शीघ्र! शीघ्र! इधर–उधर मत देखो–समय मत खोओ। बहुत देर हो चुकी, अब और अधिक देर नहीं।"

(लेखक भाजपा के मुखपत्र 'कमल संदेश' के सहायक संपादक एवं राष्ट्रीय छात्रशक्ति पत्रिका के संपादन मंडल सदस्य हैं)

उठो मेरे शेरो, इस भ्रम को मिटा दो कि तुम निर्बल हो, तुम एक अमर आत्मा हो, स्वच्छंद जीव हो, धन्य हो, सनातन हो, तुम तत्व नहीं हो, ना ही शरीर हो, तत्व तुम्हारा सेवक है तुम तत्व के सेवक नहीं हो।

(स्वामी विवेकानंद)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में युवाओं के समक्ष चुनौतियां

— हर्षवर्धन त्रिपाठी

आज के संदर्भ में भारतीय नौजवानों की चुनौतियों पर बात करना 1990 के नौजवानों की चुनौतियों पर बात करने से बहुत अलग हो चुका है। हम इसको इस संदर्भ के तौर पर देख सकते हैं कि आजाद भारत में आपातकाल के पहले तक नौजवानों के सामने की चुनौतियां और फिर उसके बाद 1990 की चुनौतियां और फिर तीसरा चरण शुरू होता है। आज के संदर्भ में युवाओं की चुनौतियां इसलिए भी सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती हैं कि ये पूरी तरह से युवाओं का ही भारत है। भारत की कुल आबादी में से करीब दो तिहाई पैंतीस साल से भी कम उम्र के हैं। आधे पचीस साल से भी कम उम्र के हैं। यहां इन दोनों ही आंकड़ों में यह भी लगे हाथ समझना बेहद जरूरी है कि यहां करीब दो तिहाई नौजवान वो हैं, जो हिंदुस्तान में आपातकाल के बाद जन्मे हैं। यानी एक तरह से सीधे-सीधे समझें, तो ये हिंदुस्तान के वो नौजवान हैं जिनकी समझ आने की उम्र तक दुनिया और उनके बीच में कोई बाधा नहीं है।

1990 के बाद के ग्लोबल विलेज में हिंदुस्तान की भूमिका क्या हो इस लिहाज से सोचने वाले नौजवानों के देश भारत की बात हम कर रहे हैं। मई 2014 के परिवर्तन ने यह साफ किया था कि अपनी सबसे बड़ी चुनौती से हिंदुस्तान का नौजवान उबर चुका है। एक दशक में हिंदुस्तान के लिए जिस तरह भ्रष्टाचार और दुनिया की अगली कतार में खड़े न होने वाले देश का विशेषण दुनिया में जिस तरह से दिया जाने लगा था। उससे ऊबे युवाओं ने इस चुनौती को स्वीकारा और सत्ता परिवर्तन करके दुनिया को बड़ा संदेश दिया। लेकिन, अब सवाल यह है कि क्या भारत के युवाओं की सारी चुनौतियां इसके बाद आसानी से खत्म होने वाली हैं। इसका जवाब पक्के तौर पर ना में है। बस इतना हुआ है कि सत्ता के सार्थक परिवर्तन ने युवाओं की चुनौतियों को नए सिरे से पेश कर दिया है। समाज परिवर्तन की बड़ी लड़ाई देश के युवाओं की सबसे बड़ी चुनौती अभी भी बनी हुई है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में युवाओं की चुनौतियों को अगर हम कुछ पैमाने पर आंकें, तो शायद कुछ ठोस तस्वीर सामने आ सकेगी। ऐसे ढेर सारे पैमाने हैं लेकिन, मैंने ऐसे सात पैमाने लिए हैं। मेरी नजर में यह सबसे बड़ी चुनौतियां हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भ्रष्टाचार, तकनीक, सोशल मीडिया और आतंकवाद।

सबसे पहले शिक्षा के पैमाने पर आज के युवाओं के सामने साफ दिख रही बड़ी चुनौतियों की बात करते हैं। उदारीकरण के बाद तेजी से हुए शहरीकरण की वजह से भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जबर्दस्त असमानता देखने को मिलती है। एक तरफ जहां शहरों में एक से एक आधुनिक महंगे स्कूल बच्चों को आधुनिकतम शिक्षा दे रहे हैं। वहीं दूसरी तरफ ऐसे भी इलाके हैं, जहां सामान्य सरकारी विद्यालय भी नहीं हैं। राइट टू एजुकेशन यानी शिक्षा का अधिकार भले लागू हो गया लेकिन अभी भी देश के करीब पंचानबे प्रतिशत स्कूल इसके मानकों पर खरे नहीं उतरते। मतलब सामान्य जरूरी सुविधाएं भी इतने स्कूलों में नहीं हैं। देशभर में शिक्षा का मानकीकरण अब तक नहीं हो सका है। उसकी वजह से भी युवाओं की किसी एक राज्य से दूसरे राज्य की शिक्षा में जाने के लिए या फिर विश्वविद्यालय या उच्च शिक्षा में दाखिला लेने के लिए अलग तरह की मशक्कत का सामना करना पड़ता है। इतने सालों के बाद भी भारतीय शिक्षा संस्थान दुनिया के उच्च शिक्षा संस्थानों में अपनी जगह बनाने में नाकाम दिखते हैं। इसका नुकसान भी यह होता है कि क्षमतावान प्रतिभाशाली बच्चे बाहर पढ़ने के लिए चले जाते हैं।

स्वास्थ्य के मामले में भी भारतीय युवाओं की चुनौतियां लगातार बढ़ ही रही हैं। स्वास्थ्य सेवाओं, उपकरणों पर भारत का कुल खर्च जीडीपी का पांच प्रतिशत से भी कम है। स्वास्थ्य के हालात का अंदाजा सिर्फ इसी बात से लगाया जा सकता है कि भारत में शहरों में दो हजार लोगों पर एक ही डॉक्टर उपलब्ध है। जबकि, गांवों में तो हालात और भी खराब हैं। गांव में बीस हजार लोगों के इलाज के लिए सिर्फ एक डॉक्टर उपलब्ध है। मरीज और डॉक्टर के बीच की यह खाई ही लोगों के स्वस्थ रहने का खर्च लगातार बढ़ाती जा रही है। जाहिर है इसका सबसे बुरा असर युवाओं पर ही पड़ रहा है। एक मोटे अनुमान के मुताबिक, 2009 से 2014 के दौरान स्वस्थ रहने के लिए भारत में लोगों का खर्च पचहत्तर प्रतिशत तक बढ़ गया है। सरकारी अस्पतालों में स्वास्थ्य की बेहतर सुविधा नहीं है और निजी अस्पतालों का सही नियंत्रण न होने से अस्पताल में जाने के बाद आने वाले खर्च का अंदाजा लगा पाना भी मुश्किल है। यही वजह है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट में 190 देशों में भारत स्वास्थ्य सेवाओं के मामले में 112वें स्थान पर है। कमाल की बात यह भी है कि दुनिया की दवाओं का तीसरा सबसे बड़ा आयातक होने के बावजूद भारत के लोगों को सस्ती दवाएं उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह दवाओं को लेकर किसी तरह की स्पष्ट नीति का न होना है।

रोजगार के मामले में भारतीय नौजवानों की चुनौती काफी बड़ी नजर आती है। वैसे तो दुनिया के सबसे नौजवान देश होने का दावा भारत के पास है। 2020 तक भारत की कुल आबादी चीन की औसत आयु से भी कम हो जाएगी। लेकिन, सबसे बड़ी चुनौती ये है कि भारत में इन युवाओं के पास कमाई के मौके कितने हैं। मौके और भी कम इसलिए भी हो जाते हैं क्योंकि, दुनिया की विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वहां के लोगों के लिए ही रोजगार के मौके घटने लगे हैं। भारतीय युवाओं के लिए रोजगार की चुनौती कितनी बड़ी है, इसका अंदाजा इस तथ्य से लगता है कि भारत में रोजगार के लायक 100 में से चालीस नौजवानों के पास रोजगार नहीं है। उस पर खतरनाक बात यह है कि रोजगार पाने वाले चालीस से साठ प्रतिशत युवाओं को कमतर मौके ही मिल पाए हैं। 2008 में आई मंदी ने तेजी से बढ़ रहे रोजगार के मौके खत्म कर दिए थे। उस समय की बेरोजगारी से भारतीय नौजवान अभी तक पूरी तरह से उबर नहीं सका है। हालांकि, अच्छी बात यह है कि नरेंद्र मोदी की सरकार के सत्ता में आने के बाद पिछली कुछ तिमाही से अर्थव्यवस्था बेहतर हुई है। लेकिन, सरकार हर साल एक करोड़ नौजवानों को रोजगार के मौके देने की जरूरत पूरी करने से अभी बहुत दूर दिखती है।

जेब में रकम भी नहीं और जीवन की सुख–सुविधा तो छोड़िए सामान्य जरूरतों के लिए भी भ्रष्टाचार से वास्ता पड़ना भारतीय युवाओं की एक बड़ी चुनौती है। हालांकि, यही वो चुनौती है जिसकी वजह से युवाओं ने कांग्रेस की अगुवाई वाली सरकार को सत्ता से बेदखल कर दिया था और भारतीय जनता पार्टी की सरकार पर भरोसे की सबसे बड़ी वजह भी यही थी। निश्चित तौर पर देश के सर्वोच्च पदासीन व्यक्ति के तौर पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भ्रष्टाचार पर काफी अंकुश लगाया है। पिछले बीस महीने में सोलह हजार करोड़ रुपए का काला धन पकड़ा जाना भी इस मोर्चे पर अच्छे दिन आने के संकेत देता है। लेकिन, रोजमर्रा में व्याप्त भ्रष्टाचार अभी भी बड़ा मुद्दा बना हुआ है। भ्रष्टाचार की चुनौती इसलिए भी बेहद खतरनाक है क्योंकि जितना भ्रष्टाचार बढ़ता है अर्थव्यवस्था की तरक्की की रफ्तार उतनी ही कम होती जाती है। यूपीए–2 के शासन के दौरान एक के बाद एक सामने आने वाले भ्रष्टाचार के मामले और आर्थिक तरक्की का दस प्रतिशत के नजदीक पहुंचकर पांच प्रतिशत के करीब लुढ़कना इसका साक्षात् उदाहरण है। ऐसे में एनडीए के शासनकाल में फिर से तरक्की की रफ्तार का सात प्रतिशत के ऊपर पहुंचने से भ्रष्टाचार पर कुछ अंकुश के संकेत जरूर मिलते हैं। हालांकि, इस मोर्चे पर भी अभी बहुत कुछ होना बाकी है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय युवाओं की एक बड़ी चुनौती तकनीक के साथ तालमेल बिठाना या यूं कहें कि दुनिया की आधुनिक तकनीक का समय से मिलना भी है। जिस तेजी से दुनिया में पूरा समाज, सरकार और कारोबार तकनीक पर आश्रित हो रहा है। उसका साफ असर भारत में भी दिख रहा है। बल्कि, ज्यादा तेजी

से दिख रहा है। क्योंकि, दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था होने की वजह से भारत और भारतीय युवाओं को बदलती तकनीक के लिहाज से सबसे बेहतर तैयार रहने की चुनौती है। इस दिशा में काफी कुछ हो रहा है लेकिन अभी भी ज्यादा कुछ होना बाकी है। स्पेक्ट्रम घोटाले का असर अभी तक तकनीक की दुनिया... खासकर संचार की दुनिया पर दिख जाता है। इसके अलावा रक्षा, परिवहन और दूसरे जरूरी क्षेत्रों में तकनीक के मामले में भारतीय युवाओं को बहुत कुछ और बहुत तेजी से करने की जरूरत है। तकनीक की चुनौती पार न पाने से भारत अभी रक्षा मामलों में दुनिया के दूसरे देशों पर निर्भर है। इसरो ने काफी काम किया है। लेकिन, वो हमारी रक्षा जरूरतों के लिहाज से काफी कम है। इसी तरह से आधुनिक बुलेट ट्रेन के भारत में आने पर भी जितनी रकम खर्च हो रही है, अगर हमारी तकनीक विकसित होती तो निश्चित तौर पर वो रकम काफी कम होती। अच्छी बात ये है कि सड़क परिवहन और दूसरे मामलों में तकनीक के साथ हमने बेहतर तालमेल बिठाया है। लेकिन, तकनीक के मामले आत्मनिर्भर बनने के लिए युवाओं को बहुत कुछ करना होगा। तभी सबसे ज्यादा तरक्की वाला देश बनने के साथ भारत इस प्रतिष्ठा के साथ न्याय कर सकेगा।

सोशल मीडिया हालांकि मेरी नजर में हिंदुस्तान के संदर्भ में काफी हद तक संतुलन की बड़ी वजह है। मई 2014 के लोकसभा चुनावों में सत्ता परिवर्तन की भी बड़ी वजह सोशल मीडिया ही रहा है। लेकिन, इसे मैं आज के संदर्भ में युवाओं के समक्ष एक सबसे बड़ी चुनौती भी मानता हूं। सोशल मीडिया की वजह से हाल में कई अफवाहों के फैलाने का काम किया गया। सबसे खतरनाक यह कि सोशल मीडिया के जरिए दुनिया, भारत, समाज को समझ रही नई पीढ़ी जाने कितने ही तथ्यों से परे जानकारी को अपनी समझ में शामिल कर ले रही है। अभी भारत में साइबर एक्ट के बेहतर नियमन और समझ न होने से भी कई तरह की मुश्किलें देखने को मिल रही हैं। सोशल मीडिया ने जहां सभी को समान मौके दे दिए हैं, मुख्यधारा की मीडिया की सामंती सोच पर चोट की है। वहीं इसमें कोई संपादकीय व्यवस्था न होने से कई बार कई प्रकार की समाज को कमजोर करने वाली स्थिति इससे उत्पन्न हो जाती हैं। इसीलिए भारतीय युवाओं को इस चुनौती से निपटने की भी तैयारी करके रखनी होगी। इसे मौके के तौर पर इस्तेमाल किया गया, तो इसके चमत्कारिक परिणाम भी हो सकते हैं।

भारतीय युवाओं के लिए आज के संदर्भ में सबसे तेजी से और बड़ी चुनौती बनता जा रहा है आतंकवाद। कमाल की बात यह है कि भारत से इस आंतकवाद का सीधा कोई वास्ता नहीं है। लेकिन, दुनिया में फैले आतंकवाद की चपेट में भारत भी फंसता दिख रहा है। अभी तक भारत की सबसे बड़ी समस्या कश्मीर या देश के दूसरे कुछ इलाकों में होने वाला आतंकवाद ही था। जो ज्यादातर पड़ोसी देशों के उकसावे की वजह से थे। लेकिन, हाल में इस्लाम के नाम पर फैलाए जा रहे आतंकवाद के जाल में भारतीय युवाओं के भी फंसने की कई खबरें आईं। अच्छी बात यह है कि बहुतायत भारतीय नौजवान धर्म के नाम पर भड़काए जा रहे आतंकवाद से बचकर रहा है। लेकिन, कई नौजवानों के इस्लामिक आतंकवाद फैलाने वाले आईएसआईएस के साथ शामिल होने की खबरें भी आईं हैं। अच्छी बात यह भी है कि हिंदुस्तान के मुसलमानों ने दुनिया को रास्ता भी दिखाया है, जब पहली बार हिंदुस्तान के करीब एक हजार मुस्लिम धर्मगुरुओं ने आईएसआईएस की निंदा की है। कुल मिलाकर भारतीय युवाओं के लिए चुनौतियां ढेर सारी हैं। क्योंकि, उनके पास मौका भी दुनिया का अगुआ बनने का है। जाहिर है नेतृत्व का मौका अगर भारतीय युवाओं को मिलने जा रहा है, तो मौके के पीछे–पीछे उतनी ही बड़ी चुनौतियां भी चुपचाप चली आ रही हैं।

(लेखक पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

हम जितना ज्यादा बाहर जाएं और दूसरों का भला करें, हमारा हृदय उतना ही शुद्ध होगा, और परमात्मा उसमें बसेंगे।

(स्वामी विवेकानंद)

योग
को प्रोत्साहन हेतु हरियाणा सरकार के महत्वपूर्ण निर्णय

- 1050 गांवों व सभी शहरों में योगशालाएं।
- हर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में आयुष विंग की स्थापना।
- योगशालाओं में योग के अतिरिक्त पांच क्षेत्रीय खेलों का प्रशिक्षण।
- आयुष विश्वविद्यालय स्थापित करने की रूपरेखा तैयार।
- पंचकूला में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान की योजना।
- मोरनी क्षेत्र में लगभग 100 एकड़ भूमि पर हर्बल फोरेस्ट की स्थापना करने का निर्णय।
- सभी जिलों में पंचकर्मा केन्द्र स्थापित किए जाएंगे।

"योग : मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य"

मनोहर लाल, मुख्यमंत्री, हरियाणा

Global Investors Summit, 07 & 08 March 2016
Pravasi Haryana Divas, 09 March 2016

To register, please visit www.happeningharyana.org or scan QR code

युवा जीवन-शैली : समस्या और समाधान

– डॉ. अभिलाषा द्विवेदी

देश–दुनिया में युवा आज अत्यंत तेजी से स्वयं का विकास करने के लिए भाग रहा है। विकास की स्पर्धा में जहां उन्हें अनेक उपलब्धियां और सुविधाएं प्राप्त हो रही हैं, वहीं कई चुनौतियां भी सामने हैं। कम समय में ज्यादा पाने की चाहत में बहुत से युवा अनेक रोगों का शिकार हो रहे हैं। वर्तमान दौर में मानसिक व्याधियां बड़ी समस्या के रूप में सामने आ रही है। हालांकि, सामान्यतः हम जब युवा शब्द को परिकल्पित करते हैं तो, शारीरिक और भावनात्मक रूप से स्वस्थ, सुदृढ़, उत्साह से परिपूर्ण छवि उभरती है लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़े बताते हैं कि तकरीबन 12.5 प्रतिशत युवा (यानी आठ में से एक) मानसिक स्वास्थ्य के किसी न किसी प्रारूप से पीड़ित हैं और क्रॉनिक बीमारियों के मरीजों में से 35 प्रतिशत युवा हैं। यूथविज डॉट कॉम की एक रिपोर्ट में तो यहां तक कहा गया है कि किशोरों और युवाओं में वैश्विक स्तर पर लगभग 20 प्रतिशत की दर से मानसिक अस्वस्थता के आंकड़े देखे गए हैं।

आखिर गड़बड़ी कहां हो रही है?

स्वयं को सेहतमंद रखना आज के समय में कोई जंग लड़ने से ज्यादा कठिन है। इन परिस्थितियों के लिए वर्तमान जीवन शैली की भी भूमिका है। युवावस्था में आम तौर पर बीमारियां दूर रहती हैं जो कि उम्र बढ़ने और अशक्तता के साथ हावी होती हैं। बीमारियां और कमजोरी 40 साल के बाद शुरू होती हैं तथा इन्हें गंभीर रूप लेने में 10–20 साल का समय लगता है। परंतु, आजकल 20 और 30 साल के युवाओं तक में यह सारी बीमारियां दिखने लगी हैं। आज युवाओं में तंबाकू, शराब के सेवन और मानसिक सेहत से जुड़ी समस्याएं आम बात हैं। करीब 16 करोड़ युवा तंबाकू का सेवन करते हैं और इनकी संख्या बढ़ती जा रही है, खासकर युवतियों में। करीब 20 फीसदी किशोर तनाव और डिप्रेशन की समस्या से ग्रसित हैं.. युवाओं में मानसिक समस्याओं की जड़ कम उम्र में ही बन जाती है। एक–तिहाई मौतें दिल के रोग से हो रही हैं जिनका संबंध स्ट्रोक से है। आजकल स्ट्रोक को 'यंग स्ट्रोक' नाम दे दिया गया है, क्योंकि यह 20–40 साल के आयु वर्ग के लोगों को भी तेजी से अपना शिकार बना रहा है। विकसित समाजों से उलट करीब 71 फीसदी भारतीय युवा शारीरिक रूप से निष्क्रिय रहते हैं और 57 फीसदी तो किसी किस्म की कोई कसरत करते ही नहीं हैं। वे उच्च वसा (फैट) वाले फास्ट फूड लेते हैं, मोटे होते हैं। आर्थिक और सामाजिक रूप से स्वयं को स्थापित करने के अत्यधिक दबाव में नींद न आना या अधिक नींद आना, सिरदर्द, चिड़चिड़ापन और आक्रामकता जैसे लक्षण आने लगते हैं। कामकाजी जीवन में असंतुलन की वजह से वे जल्द ही हाईब्लड प्रेशर और डायबिटीज से ग्रस्त हो जाते हैं। इसके अलावा लगातार लंबे समय तक मोबाइल, कंप्यूटर पर काम करने से पीठ व कमर दर्द, कंधे का दर्द, सरवाईकल स्पोंडलाईटिस हर चौथे युवा की समस्या है। आंखों से संबंधित दिक्कतें भी काफी बढ़ गई हैं। प्रिवेंटिव (बचाव संबंधी) हेल्थकेयर में काम करने वाली इंडस हेल्थ प्लस पुणे के अनुसार, "2013 के अब तक के प्रिवेंटिव हेल्थकेयर चेकअप से जुड़े आंकड़े बताते हैं कि बीमारियों से ग्रस्त 35 फीसदी लोग युवा हैं और इनमें भी 60 फीसदी जानलेवा बीमारियों से ग्रस्त हैं।"

सबसे ज्यादा हैरान करने वाली बात यह है कि प्रतिदिन 35 साल से नीचे के 900 भारतीय ह्रदयाघात से मर रहे हैं। दिल की बीमारियों से होने वाली करीब 40 प्रतिशत मृत्यु आकस्मिक और अनपेक्षित होती है। पुणे स्थित इंटरनेशनल कार्डियोलॉजिस्ट डॉ. अनिरुद्ध बी. चंदोरकर कहते हैं, "हार्ट अटैक की यह सुनामी समाज के सबसे उत्पादक तबके पर असर डाल रही है और इसके सामाजिक–आर्थिक प्रभाव का सिर्फ अनुमान लगाया जा सकता है।" लाइफस्टाइल से उपजे रोगों का सबसे बढ़िया इलाज यह है कि जितनी जल्दी हो, उन पर नियंत्रण पा लिया जाए। "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है" और संतुलित जीवन शैली अच्छे स्वास्थ्य का आधार है। स्वास्थ्य से संबंधित समस्याओं के मूल में समन्वय एवं संतुलन का अभाव है। जो अभाव आपकी प्रकृति में है वो आपके शरीर में होना स्वाभाविक है। हम सभी ने सुन रखा है, "स्वास्थ्य ही धन है, आचरण ही जीवन"। हम यदि स्वस्थ रहेंगे तो ही हमारे जीवन में शेष समृद्धि आ सकेगी। स्वस्थ शरीर ईश्वर की अनमोल देन है, पर उसे आदर्श बनाए रखना हमारा कर्तव्य है। यदि हम स्वास्थ्य की बात करें तो उसके लिए यह समझना पड़ेगा कि हमारे लिए क्या करना आवश्यक है।

आदर्श स्वास्थ्य के 4 प्रमुख स्तंभ होते हैं.. 1– नियमित व्यायाम, 2– सकारात्मक सोच, 3– पर्याप्त विश्राम, 4– संतुलित पोषक आहार।

हम सभी को सामान्यतः 30 से 45 मिनट प्रतिदिन व्यायाम करना चाहिए। ये व्यायाम किसी भी रूप में किया जा सकता है। तेज गति से टहलना, दौड़ना, जिम में विभिन्न व्यायाम, योगासन आदि। वैसे हमारे सूर्य नमस्कार में जो 12 योगासन हैं उनसे सकारात्मक ऊर्जा बढ़ाने, वजन नियंत्रित रखने, पाचन तंत्र सुधारने, नर्वस सिस्टम ठीक रखने, रक्त संचार सुचारू करने, शरीर में स्फूर्ति और लोच बढ़ाने तथा मेरुदंड को मजबूत करने जैसे कई लाभ हैं। 40 प्रतिशत युवा ओबेसिटी से ग्रस्त हैं। मोटापा अपने आप में हजार बीमारियों को आश्रय देता है। महंगाई के इस दौर में जहां दवा, भोजन यहां तक की पानी के लिए भी पैसे लगते हैं अभी मात्र एक ही स्वास्थ्यकर चीज निःशुल्क प्राप्त हो सकती है, वो है व्यायाम। यह सिर्फ शारीरिक ही नहीं मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

स्वास्थ्य का तात्पर्य मात्र शरीर से ही नहीं है। आज के भाग दौड़ भरे जीवन में कोई भी चिंता मुक्त नहीं है। मानसिक अवसाद, स्वभाव में चिड़चिड़ापन, क्रोध की अधिकता, मूड स्विंग्स जैसी समस्याएं आज के युवाओं में बहुत अधिक देखने को मिल रही हैं। यही सबसे बड़ा कारण भी है युवाओं में नशे की बढती आदतों का। यदि हमारा मन, चित्त ठीक नहीं है तो हम स्वस्थ नहीं कहे जा सकते हैं। सकारात्मक सोच बनाए रखने के लिए हम अच्छी पुस्तकें पढ़ सकते हैं, हमें सकारात्मक लोगों के संपर्क में रहना चाहिए। अच्छा संगीत और ध्यान (मैडिटेशन) भी मन को शांत और सकारात्मक रखने में प्रभावी है। अपनी रूचि के अनुसार रचनात्मक कार्य में सक्रियता भी सकारात्मक सोच बनाए रखने में सहायक है।

शरीर और मन को चुस्त दुरुस्त रखने के लिए हमें पर्याप्त आराम की भी जरुरत होती है। जिस तरह से किसी भी संस्थान के अपने कार्य सुचारू रूप से चलाने के लिए कुछ नियम निर्देश होते हैं। वैसे ही हमारे शरीर को चलाने के लिए भी प्रकृति ने कुछ नियम बनाए हुए हैं। उसे टेक्निकल भाषा में मानव जैविक घड़ी

कहते हैं। जिसके 3 भाग होते हैं, क्लीनिंग, ईटिंग और रिपेयरिंग। रिपेयरिंग का काम सोते समय ही तेजी से होता है। प्रत्येक व्यक्ति को 6–8 घंटे की नींद लेना आवश्यक है। सोते समय ही हमारा रिपेयर सिस्टम सबसे तेज काम करता है। शरीर में दिन भर होने वाले कोशिकाओं के टूट–फूट की भी मरम्मत नींद में ही होती है। शरीर के विकास के लिए आवश्यक हॉर्मोन सिर्फ नींद में ही प्रभावी रूप के सक्रिय होता है।

इन सबके अलावा जो सबसे महत्वपूर्ण है, वो है पोषण। संतुलित पोषक आहार लेना हमारे स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य है। हमारे शरीर का 70 प्रतिशत भाग जल है। 25 प्रतिशत भाग प्रोटीन का है, जिससे हमारी कोशिकाएं, त्वचा, बाल, नाखून, आंतरिक ऑर्गन बने हुए हैं। शेष 5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट और वसा तथा अन्य तत्व होता है। हमारे जैविक चक्र में सफाई ठीक प्रकार से हो सके इसलिए हमें प्रतिदिन 3–4 लीटर पानी पीना चाहिए। हमारे भोजन में प्रोटीन उचित मात्रा में होना चाहिए। भारतीय चिकित्सा परिषद् की सलाह के अनुसार हमारी प्रतिदिन की प्रोटीन की आवश्यकता 1 ग्राम प्रति किग्रा बॉडी वेट है। यानी की यदि आपका वजन 65 किग्रा है तो आपको प्रतिदिन 65 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त शरीर की सभी जैविक तकनीकी क्रियाओं को चलाने के लिए हमें 13 विटामिन और 11 मिनरल्स और ओमेगा 3 फैटी एसिड की जरुरत होती है। जो हमें रोज के भोजन में शामिल करना चाहिए। सुनिश्चित करें कि मिश्रित अनाज, दालें, दूध, नट्स और विभिन्न रंग के फल और सब्जियां हमारे भोजन में सम्मिलित हों। संतुलित आहार आज के समय की ऐसी समस्या है जो स्वास्थ्य की सभी समस्याओं के मूल में है। रासायानिक खाद, कीटनाशक, खरपतवार नाशक एवं अन्य रसायनों के अंधाधुंध उपयोग के कारण हमारे शरीर में कई तरह के विषैले तत्व जा रहे हैं और भोजन की पौष्टिकता भी कम हुई है। ऐसे में न्यूट्रीशन सही मात्रा में मिले उसके लिए प्राकृतिक न्युट्रीशनल फूड सप्लीमेंट कारगर सिद्ध हो रहे हैं। आधुनिक खान–पान शैली में फास्ट फूड, जंक फूड संस्कृति के चलते ज्यादा ध्यान स्वाद पर होता है ना कि पौष्टिकता पर। इस कारण बच्चे और युवक–युवतियां खाने में वसा की मात्रा अधिक ले रहे हैं और प्रोटीन, विटामिन्स एवं मिनरल्स की कमी बनी हुई है। यह न्यूट्रीशनल गैप धीरे–धीरे विभिन्न बीमारियों का कारण बन रहा है।

हम सभी ने सुना है, रोकथाम ईलाज से बेहतर है.. सौ दवा से एक परहेज भला.. तो, अपनी जीवन शैली में थोड़े बदलाव लाकर, स्वस्थ मानसिक वातावरण में रहकर, नशीले पदार्थों का प्रयोग बंद करके, योग और व्यायाम से साथ ही पर्याप्त नींद लेकर बहुत सारी ऐसी स्थायी बीमारियों से हम बच सकते हैं। जिनके हो जाने पर सिर्फ लक्षणों का प्रबंधन हो सकता है, जिनका कोई स्थायी ईलाज नहीं है। सोचिए नहीं अमल कीजिए और स्वस्थ रहिए।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)

एक शब्द में, यह आदर्श है कि तुम परमात्मा हो।

(स्वामी विवेकानंद)

STUDENT POWER

– Raj Kumar Bhatia

More than four decades ago in 1971 ABVP presented to the country the philosopical and theoretical concept of "student is citizen of today, not of tomorrow." Few years later another such concept - "Students' power nation's power" was presented. The two concepts, though interrelated, were distinict in their emphasis, the latter being wider and more important than the former. For ABVP it was neither slogan morgering nor romanticism. ABVP presented them out of faith and coviction which obviously put on us on it to prove their legitimacy. And ABVP amply did so one may ask for the proof.

Before the proof is given we need to pay attention to one development and two explanations. The development relates to history of ABVP. In its history of over six decades ABVP has emerged as the unique throughout the world. As a fullfledged ever growing permanent organisation of highly floating population of students, mainly studying in colleges and universities, ABVP has created a niche for itself in the public life of the country. The two explanations: one, the two concepts need to be briefly understood. 'student is a citizen of today' conveys that a student can play the role which is expected from a citizen. 'Students' power' means the collective power of students. 'Nation's power' underlines the i.e. the strenght of the nation. 'Student's power-nation's power' refers to the relevant and effective contribution of organised students in making the nation powerful. Two, the two concepts can be summed up as one which may be expressed like this: sutdents as citizens of today have the potential of becoming a power which can prove as nation's power.

A nation's power is manifested through scores of small and big features, elements and phenomena which make strength of a nation. Such features, elements etc. may take the form of social, political, economic or other forces or may be represented by the organisations and institutions which function for the benefit of the nation. Needless to say that ABVP belongs to the category of organisations and institutions.

Now we return to the proof of ABVP as a students' power having become the nation's power. The proof started unfolding itself ever since early 1970s when ABVP played role in Navnirman movement of Gujrat during 1973-74, in Bihar and JP movement of 1974-75, in emergecy during 1975-77 and in the Lok Sabha elections of 1977. The ABVP became nation's power when it participated in and led first two movements against corruption and misgovernance and actively participated in struggle against emergency and in electoral battle for restoration of democracy and defeat of dictatorial rulers.

Since than ABVP never looked back. For pancity of space details of what ABVP did during the following decades are being skipped. It's enough to look at the current scenario going back only to past one decade. ABVP has grown in a big way during the last decade. Today it has under its wings lakhs of students belonging to all states and cones of the country. If students of mainstream courses like science, arts, commerce etc. are joining ABVP so are students of medicine, engineering, technology, management,

law etc. doing of tribal students are ABVP in big number so are female students doing of ABVP's strength is to be measured from victory in student union elections then the recent example of Delhi University and JNU is enough to indicate that all this year ABVP captured all the parts of Delhi University Student Union with huge margins. It also created foothold in student unions in Bengal, Assam and Kerala. ABVP is perhaps the only student organisation of the country which holds its national conference every year, that too in a big way. It's this students' power, motivated by patrotism, constructivism and social committment, which is contibuting meaningfully and effectively in the task of nation building in diverse ways.

Few examples; Education is the main field of ABVP. It remians alive to all major issues of the field and, with the inputs from experts, express its views on most of them. Constuctive approach and constructive activities are matter of faith for ABVP. Hundreds of such activities are organised all over the country round the year. To unfold the talents and capacity of students activities like Student for Development, Pratibha Sangam, Dipax etc. are regulary promoted by it. To sensitize the elite student about the acute problems being faced by ordinary citizens ABVP organises Anoobhuti for students of IITs & IIMs.

National integration and nationalism are close to the heart of ABVP. It organises scores of activities to strengthen them,. Students Exprience in Inter-state Living being its 50 years old project. ABVP takes up welfare issues also. For over a decade it has done a lot for getting implemented the welfare schemes for SC and ST students of the country.

In the interest of the country and society ABVP also indulges in agitational activities. Movement against Bangladeshi infiltration was the major issue taken up by it few years ago. It always remains in the forefront in fight against corruption and commercialisation of education.

ABVP has ventured into role of students at the international level too. It took initiative in 1985 to establish World Organisatino of Students and Youth which has become a vibrant organisation in last few years. Recently it has started addressing the problems of Indian students studying abroad.

Much more can be written but it is not neccessery. In conclusion it can be said that perhaps ABVP is destined to play more effective role than it has done so far.

(Writer is a former National President of ABVP)

श्री रामकृष्ण कहा करते थे, "जब तक मैं जीवित हूं, तब तक मैं सीखता हूं" वह व्यक्ति या वह समाज जिसके पास सीखने को कुछ नहीं है वह पहले से ही मौत के जबड़े में है।

(स्वामी विवेकानंद)

आईपी

वीआईपी

ईएसआईसी-2.0
चिंता से मुक्ति

सरल इलाज और सामाजिक सुरक्षा को समर्पित ईएसआईसी-2.0 की सेवाएं!

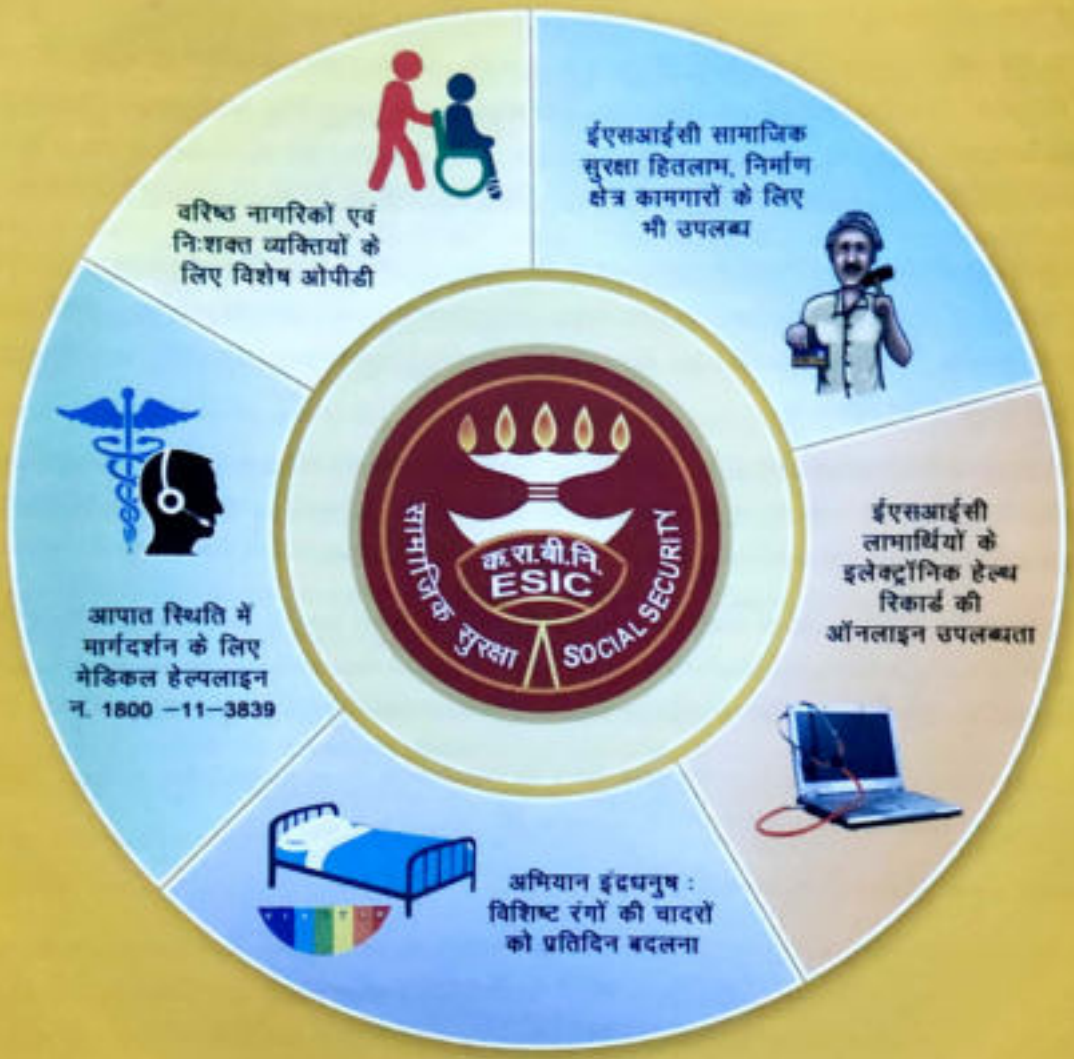

ईएसआईसी योजना के प्रमुख हितलाभः

• चिकित्सा हितलाभ • बीमारी हितलाभ • मातृत्व हितलाभ • अपंगता हितलाभ • आश्रितजन हितलाभ • प्रसव व्यय • वृद्धावस्था चिकित्सा देखभाल • अंत्येष्टि व्यय • बेरोजगारी भत्ता

श्रम एवं रोजगार मंत्रालय
Ministry of Labour & Employment
भारत सरकार, Government of India

कर्मचारी राज्य बीमा निगम
Employees' State Insurance Corporation
पंचदीप भवन, सी.आई.जी. मार्ग, नई दिल्ली – 110 002
वेबसाईट: www.esic.nic.in, www.esic.in

अधिक जानकारी के लिए अपने नज़दीकी ईएसआईसी शाखा/प्रभागीय/उप-क्षेत्रीय/क्षेत्रीय कार्यालय से संपर्क करें अथवा www.esic.nic.in, www.esic.in पर लॉग ऑन करें या टोल फ्री हेल्पलाइन नं. 1800 11 2526 पर कॉल करें।

Education & 5 Methods by which ABVP can fix it

– Dr. Rashmi Singh

Education, is the problem of all problems in India, wrote Sister Nivedita when she began her heroic education mission in India. Though the colonial context was washed away several decades away, this description is still relevant.

Growing up in Kolkata (Calcutta then), I remember how the student organizations used to herd college and even school students for the political rallies of their bosses, the infamous 'bam sarkar michil' meaning the rally of the Left Front government. This has been the customary behavior of all student organizations, to do crowd sourcing among the student community for their political masters. There is only one exception to this rule –ABVP. Not only is ABVP its own master, it is the largest and the only pan-Indian, truly federal students' organization in our country. This gives it unique strengths. With a membership of nearly 28 lakhs, a network of 6,945 college units and a clutch of Special Purpose Vehicles (SPVs), it is unparalleled both in its geographical spread and compositional character.

The broken condition of our education system is a pre-eminent national concern. And with a big depository of University Professors who live by the code of volunteerism, ABVP is ideally suited to take on the repair task.

I suggest the following methods.

1. **Create Learning Support Centres**

   Nearly all pupils in a classroom context from school to post-graduation find class room teaching insufficient to navigate their syllabi. Such a situation should never be there in the first place. But given this reality, after-class learning support is essential. Private tuitions are exorbitant and then also quality is not guaranteed. Ask any parent and you will hear what a travail it is to find the appropriate teacher. The result is we have created masses of disengaged students. We have students who read but do not understand; we have students who amass degrees but no knowledge. These are the characteristics that breed a sub-standard workforce. Thus,"padh likh ke kuch nahin hua," is a common statement we hear.

   So, what is to be done? Good and dedicated teachers are required, they are as important as the provisioning of the basic amenities and the development of critical infrastructure. Sure, there are several voluntary efforts that are on, but they lack scale. Swamiji (Swami Vivekananda) talks of the requirement of scale extensively in two wonderful collections in Bengali, Bani o Racana & Swami-sisya sambad (available also in translations). Swamji says a few thousand graduates cannot be the basis of a nation, educating the masses is the only way to revive India. Today we have to convert this ethics into a sturdy programme. Even the best-designed official programme cannot fulfill this

agenda. For the accrual of results, it has to be performed by teachers on a non-payment, non-benefit basis, with sewa as the core motivation. Hence this task must be performed by ABVP.

ABVP has a bank of 15000 Professors and thousands of teachers belonging to different disciplines. The number is increasing. We must ask every municipal ward in the country to make available a community centre where free learning support classes can be conducted. These will become the exemplary Teaching Centres of the country. The Elders who are senior citizens can man the administrative duties of these Teaching Centres, like maintaining progress schedules of attending pupils. The Elders will also feel happy to give their time for a meaningful cause. There is a lot of goodness in our country, let us dive into that wellspring.

II. Raise a Corps of Maths, Science & Grammar Teacher Volunteers

The major challenge areas for our pupils can be pinned down to three -- Maths, Science and Grammar. Most of them cannot follow their Maths classes and often teachers and parents dismiss such students as having no mathematical ability. This incomprehensibility is the fault of the teacher, not the students. I have seen several instances when even University teachers shirk from teaching numerical content to students or it is the last thing they teach. How then can we expect great science in the country to happen?

In the teaching of social sciences also, the scientific method of inquiry, accuracy and solution has to run through. Because we do not have this method in our education system, a common sighting in our country is at any given time, you can have five hundred 'scholars' debating secularism and democracy for five days without any resolution and reassemble again to do more of the same. But it's difficult to find five high-grade engineers who can execute a project on time.

Then if we consider language education, grammar is the bedrock of all language, the expressive power of all subjects. Therefore it needs utmost attention. Without sound grammar, every discipline becomes a babel. Corresponding to these deficits we need a cadre of teachers.

Welcome subject experts to build these modules but avoid celebrity intellectuals. Celebrity intellectuals are an expensive undertaking, you will have to pay their airfares and host them in luxe hotels. Besides, most of them do not have the stamina for the sort of voluntary work that we want.

III. Sanskrit Study Promotion

It is a frequent lament that our language standards are faltering badly. This is an anticipated failure. The lack of nobility and dignity in our languages, spoken and written has followed from the neglect of Sanskrit.

Every civilization values its classical learning. The European Renaissance was based on Hellenism, the classical heritage of western civilization. When they lost it in the middle ages, the called this phase of history, the dark ages. When the intellectual recovery happened after several centuries, they have never let it go. And all major European capitals, its museums, universities and even popular culture worship this splendor. Japan's work discipline and perfection is based on its Samurai culture. Most countries that are successful have built their systems based on their epistemological heritage. For advancing this in India, promotion of Sanskrit study is fundamental. The Supreme Court pointed out in the Santosh v Secretary, Ministry of H.R.D, 1995 that in promoting the unity of India, the common culture and heritage of India, the foundation is the Sanskrit language and it must play a leading part.

We have to introduce our younger generation to this classical heritage. However, we have to make it contemporary. For this we have to do three things. First, we have to disentangle it from exclusive caste clubs. Second, we have to make it functional, relatable to everyday life, not make it seem like some esoteric gibberish, as it has been done till now. Third, we have to link it with Yoga, Art and Culture history to make it an important part of popular culture. If implemented, these measures will popularize Sanskrit learning.

IV. Constitutional Values

When we consider the experience of other countries that went through a similar history as India of colonial rule, we get an immense appreciation of what our forefathers achieved. The constitution of India, its birth, growth, maturity and its ongoing refinements are indeed a matter of wonder. When countries have struggled for decades, dealt with civil wars and enormous chaos, we have been governed on the basis of a constitution and any effort to change this state of being is struck down. It is finest assurance of individual liberty and safety. Our Prime Minister, on every occasion underscores the merits of our constitution.

The challenge we face today in society is the downward filtration of our constitutional values. Particularly this is relevant when we consider the treatment of our women and depressed classes in social relations.

Therefore constitution study circles, as many as possible are needed. Teach and deliberate a few clauses a week just as the verses of our holy books are done.

V. Convert Student Unions into Academic Watchdogs

While running WOSY (World Organization of Students & Youth), often I have had students come up to me and say that they don't see any sense in what their teachers are teaching and that they could have taught the class in a better fashion. This is serious feedback. The key performance indicator (KPI) for a teacher is his/her teaching ability in a class. Therefore we must convert our Student Unions into Academic watchdogs who maintain progress reports of various subjects on several variables—Comprehension by class, Question Papers (whether any out of syllabus questions are set), the performance of the class, the reasons for good and bad results.

Our Student Unions must get this discipline. This will be their contribution to Skill India. For India to become a high growth economy that world thinks it can, every section of the society has to play its role. It's just not the government's headache.

Conclusion

Sarve Bhavantu Sukinah is the objective. For this to happen there has to be convertibility into tangible programmes. This is not a verse that is to be remembered only when addressing an audience. It has to become our daily work ethic. 'Svalmapyasya dharmasya', even a little of this dharma is a permanent advance.

(Writer is an Editor of Media House working in the sector of Telecom & Energy)

YOUTHS : THE HARBINGER OF CHANGE

– Punit Pushkar

The zeitgeist of first two decades of 21st century has been student and youth activism. The students and youth groups' world –wide have taken to the street to protest against socio –political and economic issues they feel strongly about. Students and youths are being hailed as the dormant giant who just emerged to take control, take charge and change the landscape of activism. Be it the massive protest on Delhi gang rape issue or their tireless efforts using social media as a tool to garner support for a strong government at the centre, the students and youth groups have achieved their desired goals. They constitute a large community and when united, can be the catalyst for much proactive change. All over the country students are coming together. They are stepping into their shoes as the citizens of tomorrow, the new leaders of a more empowered society, the representatives of a generation characterised by concern and socio-political consciousness.

Student activism grabbed headlines largely during sampoornaKranti movement or J P movement, and a whole lot of politicians who are currently ruling the roost trace their origin to this. The spirit of this activism continued in the later decades also. The manifestation of youth power in this decade was seen during the Anna Movement (Lokpal Movement). Fade up with news of corruption–scams and nepotism during the decade old congress regime at the centre the youths and students rallied behind Gandhian Anna Hajare and hold a series of massive **demonstrations** and protests across **India** intended to establish strong legislation and enforcement against perceived endemic political corruption. You might have witnessed the sea of humanity in and around Ramlila ground in support of this movement. Youths took leave from their offices to join the movement and adorned a Gandhian Cap and claiming "I am Anna". It seemed that this movement will prove to be a last nail in the coffin of political corruption, but this movement was hijacked by former associates of Anna for their political gains and a strong and broad-based movement fizzled out.

The youth and students again spoke their heart–when they were apprised by media about the brutality meted out to Nirbhaya. Candle light vigils, protest marches and rallies — the streets of Delhi were rife with agitated students evangelising the need for women's safety. Across the country, newspapers were flooded with pictures of crowds, strikingly young, raising their voice and demanding justice for the victim. Despite teargas, water cannons and the fear of the police, the protests continued undeterred for weeks. Students had made their mark on the national scene. A trend had emerged and a precursor had been set.

The face of Student and youth movement has changed drastically. What used to be a scattered, uncoordinated smattering of activists has now transformed itself into a cohesive effort by the student fraternity. With the internet and social media at their beck and call, the youngsters of today are more empowered to put forth a united front and exert the force of the collective.

India is at the critical period of our history and youths are on the facing the onslaught of moral degradation and are bereft of nationalist ideals. In this scenario through imbibing the thoughts of Swami Vivekanand, who represents the eternal youth of India-they can again become harbinger of change.

(Writer is a Deputy Editor in News Nation TV Channel)

समर्थ भारत